





सतपंथ ज्ञान साहित्य संगम
हिन्दी विभाग १ला

आगम (भविष्य) वाणी

हिन्दी, संस्कृत, गुजराती भाषा, टीका सह

" सा विद्या या विमुक्तये "

विद्या जो है की—हमे मुक्त (स्वतंत्र) कर दे
सदज्ञान वर्धक, ज्ञानामृतम् वाणी याने
(संस्कृत,) सतपंथ ज्ञान साहित्य संगम (प्राकृत)



ॐ नमो जयश्री, तत्सत् हरी ॐ

प. पू. श्री सतगोर पात्र (लायक) ब्रह्म ! ईन्द्र ईमामशाहजी के एक शुभ वरदहस्त कै. काकाश्री सतपंथाचार्य महन्त गादी अधिपति साहेब नाम निमित्त काका, श्री रामजी लखमणजी इनके सं. स्मरणार्थ तथा प. पू. श्री राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी जन्म शताब्दि निमित श्रद्धांजलि सहित यह वर्तमान पुस्तक टुंके टुंके गद्य-पद्य ।

इदम सत्य सनातन आर्य पवित्र सतपंथ
धर्मसार साहित्य संगम
याने संशोधन संग्रह संस्कृत हिन्दी, गुजराती, भाषासह
श्री सतपंथ सनातन पवित्र जिज्ञासु नीत्योपयोगी प्रकाशन—



सतपंथ ज्ञान साहित्य संगम

हिन्दी विभाग १ला

आगम (भविष्य) वाणी

हिन्दी, संस्कृत, गुजराती भाषा, टीका सह

" सा विद्या या विमुक्तये "

विद्या जो है की—हमे मुक्त (स्वतंत्र) कर दे
सदज्ञान वर्धक, ज्ञानामृतम् वाणी याने
(संस्कृत,) सतपंथ ज्ञान साहित्य संगम (प्राकृत)



ॐ नमो जयश्री, तत्सत् हरी ॐ

प. पू. श्री सतगोर पात्र (लायक) ब्रह्म ! ईन्द्र ईमामशाहजी के एक शुभ वरदहस्त के. काकाश्री सतपंथाचार्य महन्त गादी अधिपति साहेब नाम निमित्त काका, श्री रामजी लखमणजी इनके सं. स्मरणार्थ तथा प. पू. श्री राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी जन्म शताब्दि निमित श्रद्धांजलि सहित यह वर्तमान पुस्तक टुंके टुंके गद्य-पद्य ।

इदम सत्य सनातन आर्य पवित्र सतपंथ
धर्मसार साहित्य संगम
याने संशोधन संग्रह संस्कृत हिन्दी, गुजराती, भाषासह
श्री सतपंथ सनातन पवित्र जिज्ञासु नीत्योपयोगी प्रकाशन—



लेख संपादक एवं प्रकाशक :-
(संकलन-कर्ता) वि.. वि. वि.
पंडित श्री शंकरलालजी सम्पत अथर्व-वेदी
खानदेश (काहूरखेडे) वाला
मु० पो० हरताळे.
ता. भुसावल E. K. (M.)

ॐ

ॐ नमो जयश्री तत्सत हरी ॐ

प. पू. श्री मदाद्य सतगोर पात्र (लायक) ब्रह्मा (ईन्द्रईमामशाह) जीके अनेक शुभ वरदू हस्त गादि-अधिपति सा. कै. काकाश्री रामजी लखमणजी इनकी यादगारी एवं प. पू. श्री राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी जन्म-शताब्दि निमित.—"हंसो यथा" पाठक वृन्दों की, करकमल की, शोभा.

१९७० इ. स.) प्रथमावृत्ति (संवत २०२६

मूल्य
लोभ—वृत्ति

प्रथम पहेले आप श्रीमानजीका नाम लीख देनेकी कृपा मेहेर करोगे तो, बहुतही आसान होगा !

: मुद्रक :
भालचन्द्र डाह्याभाई पटेल
किरीट प्रिन्टरी
रतनपोळ फत्तेभाईनो हवेली
अमदावाद





ॐ नमो जयश्री तत्सत हरी ॐ

: परमपिता परमात्माने नमो नमः :

: सर्वेषां शुभ मंगल भूयात :

१-धर्मस्य तत्वम निहितम गुहायाम, महाजनो येन गतः सपन्थाः॥
२-इदम, सत्य, सनातन, आर्यश्री, स्वधर्मनिधनम श्रेयः स ॥
३-सत्य अहिंसा परमो धर्म, वेदो खिलो धर्म मूलम् ॥
४-आचारे प्रथमो धर्म, सत्या नास्ति परोधर्म ॥
५-सत्य मेव जयते, धर्मो रक्षति रक्षिताः ॥

नहि ज्ञानेन सदृष्य, पवित्र मिह विध्यते ॥

ज्ञान के सिवाय अन्य पवित्र कुछ भी नहीं है ।

न ज्ञानः न च मोक्ष, स्यातेषां जन्म शतै रपि

ज्ञान संम्पादन करे वगैर सो जन्म तक मोक्ष कदापी नहीं मीलेगा ।

ब्रह्मावेद न मात्रेण, ब्रह्मप्रित्येव मानवाः ॥

अत्र नास्त्येवः सनदेह, स्त्री वारं कथयाम्यहम ॥

वेद प्रमाणे गुरू भक्तिका जिन्होंने अनादर कीया उनको न ज्ञान है, न मोक्ष, इस बावतमें कुछ भी शंका नहीं है, संदेह न हो कि-हम तीन वखत ब्रह्म साक्षी देकर शपथ-विधि ले शकते हैं ।

ॐ

ॐ नमो जयश्री तत्सत हरी ॐ

प.पू. श्री वर्तमान कली युगात्मा, श्री निष्कलंकी नारायण जनार्दनम

स्वधर्म निधनम श्रेयः स...योगः कर्मसु कौशलम

इस जीवन संसारमें मायासे निर्लेप रहकर मायाकी पीछा[illegible] करके जगतको असार समजते हुए, नितिसार कर्मण्ये वाधिकार[illegible]



प्रमाणे समझकर मायावी पदार्थोंसे मोहका त्याग करके कर्म करते हुये भी निष्काम भावसे पुरुषार्थ भावसे कर्म करके जल औरकमलकी भान्ति सम्बन्ध फरजको समजकर विषयों इन्द्रियोको काबुमें रखकर मन ताबेमें रखके आत्म चिन्तनमें जीवनका समय बिताकर साथ व्यवहार हुन्नर उद्योग कलादियोको विकासके पथपर त्यागकी भावनासे भोक्ता बनकर प्रचलीत वर्तमान कलीयुग समय संन्धीमें वेद अथर्वको प्रधानपद पर रखकर वेद मान्यतानु सार ज्ञान विज्ञान याने "पहेली किली हिकमतकी कीजे," याने सचा जुठा परखने की जो कला है इसी ज्ञान विज्ञान से "एकम सद विप्राबहुधा वदन्ती," असे इस सर्व साकार स्वरुप दसवा अवतार विभूति पात्र विष्णुं भगवान चालू वर्तमान कलीयुगी आद्यपुरुष परमात्मा अध्यक्ष श्री निष्कलंकी नारायण जनार्दनकी पहिचान करके उनके नामसे जप, तप, तिरथ, व्रत, पुजन, अर्चन, ध्यान, धारणा, उपवास आदि ध्येय पूण्यदान सहकार सहायता वगेरे धर्मांगो धर्मेन्द्रियको "अध्यात्म ज्ञान नित्य त्वम" "यो वेत्ति तत्वताः" नु सार समज करके उनके ही नामका गुणगान गुणानुवाद से जन्म मरणकी फेरेको मिटाकर मोक्षगामी होना यही है वेदशास्त्र युक्त...योगाः कर्मसु कौशलम् ।

लिपी

संसारमें जितनी भी लिपियाँ है, उन सबमें अधिक वैज्ञानिक लिपी है "देवनागरी"।

यदि इस "देवनागरी" लिपीको स्वीकारकर लिय जाये, और समस्त भारतिय भाषाओका साहित्य "देव-नागरी" लिपीमे हो, तो बहुतसी कठीणाइयोका और पूर्वाग्रहोका समाधान हो सकता है वास्तेः— संसार सोचे और समझे।

—पंडीत नेहरू



भूमिका

जिस प्रकार संसारकी नष्ट मर्यादाओंको पुन्हः स्थापित करना तथा समाजमें फैली हुइ कुरीतिओंको मिटाना महा-पुरूषोका कर्तव्य है। उसी प्रकार उनके उन (वह) कार्योंको चिरंजिवी बनाना (जीससे आगे आनेवाली संताने उन्हे लाभ उठा सके) अच्छे लेखको और कवियो पर निर्भर है। वैसे ही : सत्य : के संशोधन सत्य साहित्यके हंस रूपी मानवीयो पाठक गणो की भी सम साधारण फरज है कि-सत सत्य मानवताका अभाव विरोधाभास न हो, किसकी निंदा न हो ऐसी वाणीको संकलन सदा प्रकाशित करते रहे, ताकी भावी पिढी सोचे और समझे।

प्रस्तुत पुस्तक यद्यपि देखने में बहुत ही छोटी है किन्तु गुणोमें किसी वेद ग्रंथ से कदापी कम नहीं है। ईसीमें आदि से अंत तक संक्षिप्त रूपमें ज्ञान विज्ञान संपादन करने वालेके लिए स्वकर्म स्वधर्म स्वदेश प्रेम स्वहित स्वजाती समाजवाद और साम्यवाद इत्यादि संस्कृति और साहित्य पाठ अभ्यास-क्रम चारित्र रूपमें सुंदर ढंगसे गद्य, पद्य सारसमूह संग्रह संगम करके सार संग्राहक प्रकाशकने सागरको गागरमें भराकर दिखलादीया है. और वह भूत, वर्तमान, एव. भविष्य वाणी युक्त संकलन है। समझमे लेने जैसा है।

इस पुस्तकका एक एक पाठ वाक्य शब्दादि बहुतही मार्मिक है। तथा धर्मकी बारे में निती-अनितिको-न्याय-अन्याय को समझने के लिये, धर्म इस शब्द का अर्थ-भावार्थ अन्वय अर्थ इत्यादी बाबतो समझने के लिये विश्वासु, श्रद्धावान, अभ्यासु व्यक्ति के लिये शिक्षा और साहस की तो यह पुस्तक जीती जागती तस्वीर है। बलिक मेरा तो यहां तक विश्वास है कि-ऐसी रोचकपूर्ण सत्य तथा भावपूर्ण पुस्तक सुन्दर और साधा-रण सर्व धर्म समन्वय पुस्तक अविरोध अनिंदक याने अथर्ववेद सार संग्रह जैसी सचेतन पुस्तक. इस पुस्तक के पहले सनातन, आर्य, पवित्र, श्रीसतपंथ साहित्य संबंधि सेवा करनार "प. पू.



श्री कै. बाबा साहेब प. खाकीजी" के सिवाय अन्योन्य संशोधकोंकी तरफसे नहीं बनी होयगी।

वास्ते—पढनेवाले पाठक गणने अपूर्व लाभ उठाना होगा। और पाठक गणभी कैसा हो कि

"हंसो यथा क्षिर मिबाम्बु मध्यात्" प्रमाणे।

सतपंथ सदा यह है "सच राह बता देना।
कह कह के सुना देना" कर करके दिखा देना॥

खाकी श्री०

प. पू. श्री महात्मा गांधी जन्म शताब्दी याने नवीन भारतकी सिहस्त पर्वणी पूर्व-कर्म पूण्यकाल पर्व निमित्त इस वर्तमान प्रस्तुत पुस्तककी, इदम सत्य सनातन आर्य, पवित्र आदर्शयुक्त श्री सतपंथ स्वधर्म निधनम श्रेयस-भूत, वर्तमान भविष्य पेसी त्रिकालदर्शी वेद-ईश्वर, गुरु, इस त्रिपदत्वम ज्ञान-सत्र सार साहित्य संगम याने, पाठक गणोकी कर कमलकी शोभा.



सामाजिक आस्था और सुधारवाद. दृष्टिकोण

लेखकका काम यह है कि.......

मनुष्य हृदय आत्मासे महान है। उस में साहस करुणा और प्रेम है, अद्वितिय गुण है। और वह कभी पराजित नही होता।

कवि और बंदूक—अखबारों के द्वारा सुना जाता है कि—पटामें तारीख ३ डिसेम्बर १९६८ ई. स. को रात्री में कवि—संमेलन की समाप्ति पर गोली चल गई। अखबारोंमें केवल यही छाप दीया कि—गोली चलानेवाले व्यक्तियाँ यह चाहते थे कि—कवि संमेलन अभी जारी रहे, परंतु अंतिम कवि महोदय काव्य पाठसे विरक्त हो चुके थे। विरक्ति का कारण-खोज करते करते पता चला कि कवि संमेलन में महिलाओंकी उपस्थितो में अशोभन अभी व्यक्ति की कविताएँ चल रही थी। जो रोष उत्पन्न कर रही थी। महिलाएँ उठकर चल गई थी, और कवि महोदय फिर आग्रह करने पर भी कविताएँ सुनाने के 'मूड' में नहीं रहे. मूल प्रश्न यह है कि—आज के कवि संमेलनों में कुछ अश्लिल रचनाओं का और उनसे अधिक अश्लील और निम्नस्तर पर की गद्य टिप्पणीओंका विशेषकर महिलाओं पर कटाक्ष करते हुए पाठ करना एक रिवाज सा हो गया है।

जहाँ कुछ लोगोंकी यह भद्दा कविता—पाठ कुत्छित आनंद देता है। वहाँ महिलाओ और समभ्रांत नागरिको को वह अशक्य हो उठता है।

परिणाम—जो पटामें हुवा वह तो असाधारण है। परंतु कानपुरमें मेडिकल एसोसीएशन हालमें सुना था कि—एक महिला चंप्पल लेकर कवि—महोदय को घुरती हुई खडी हो गई थी और उन्हें क्षमा माँगकर कविता बंध करनी पडी थी।



आगरेमें भी वोही कविता उन्होंने फिरसे एकबार भोले-पनसे चालु रख्खी थी और आपत्ति करने पर उसे बंध किया गया।

यहाँ शील—अश्लिलका प्रश्न साहित्यमें शील—अश्लिलके प्रश्न की तरह नहि उठाया जा रहा है। और उठभी नहीं सकता।

साहित्य अश्लिल नही होता. जो अश्लिल है वह साहित्य नहीं है. पर कवि संमेलनमें पढे जानेवाली. इसी तरहकी रचनाओंमें अश्लिलताका प्रश्न ईस लिये उठता है कि—वे काव्येत्तर प्रयोजनसे लीखी जाती है. उनका उद्देश्य रास्ते परके लोगोंका मनोरंजन करना ही नहीं। उनके स्तर पर उतरकर उनका समर्थन पाना होता है। बाजारूपन और अश्लिलता वहाँ पर पनप सकति हैं उससे बचजाना चाहिये।

मनुष्य नैतिक अपराध तभी कर सकता है कि—जब उसकी जरुरतें पुरी नहीं होती। याने जब मनुष्य के आत्माके बीच व्यवस्था याने अन्य शक्तियाँ दीवार खडी कर देती है। वह। मनुष्य के पतन के कारण—मनुष्य के भीतर नहीं बल्के समाज के भीतर देखना होगा।

इस गद्य पद्य महाकाव्यकी रचनाओका उद्देश्य सिर्फ मानव कल्याण है. आशा व्यक्त की जाती है कि-इस श्री सतपंथ ज्ञान साहित्य संगम से काफी योग्य ज्ञान-दान मिलेगा मिलता रहेगा अस्तु—

इस वर्तमान पुस्तकका नाम

दो विपरित क्षेत्रोमें से आनेवाली सरीताओका जब जहाँ पर सह मिलन होता है. तब उसे हम संगम कहते है. इसी प्रकारसे दो विपरित क्षेत्रोमें सोचने और काम करनेवाली व्यक्ती अपने विचारोका आदान प्रदानकर, जब उन्हें दूसरे के अनुसरणमें अर्पित कर दे, तब दो विचारधाराओका संगम हुआ तब ऐसा माना जाना चाहिये. ऐसे ही विचारधाराओका यह वर्तमान पुस्तकः-इदम. सत्य सनातन आर्य आदर्श युक्त पवित्र ऐसा



स्वधर्म निधनम श्रेय : स सतपंथ ज्ञान साहित्य संगम यानेः–गद्य–पद्य संग्रह मात्र है।

इनमें अपने आधि दैवी, आधि भौतिक, और अध्यात्मिक जीवन और उससे संबंधित क्षेत्रकी साधारण सभी क्षेत्रकी, साधारण सभी प्रकारकी शंकाओंका कदाच पुरेपुरा समाधान न होने जैसा हो तो भी, फिर भी समाधान पानेका प्रयत्न कीया गया है कारण—

इस वर्तमान पुस्तकमें लगभग साधारण सभी देश विदेश और वहाँ के प. पू. श्री. मानवंत साधुसंत, महंत, ऋषिमुनी गुरु ब्राह्मण, संन्यासी, फकीर, पीर, पेगंम्बर, ओलीया इत्यादिकी सत्यपरा मर्श, और सतसंगकी सभी साधारण अनुभविक जैसी ही बाते संगठोत कि गई है।

कहना है की—साहित्य निर्विकार होना चाहिये किन्तु विश्व विमुख नहिः–उनका भविष्य जो यह है की, आगे भविष्यमें जो क्षेत्र साहित्यका आनेवाला है, वह बडा व्यापक है. मजहब (पंथो) का और राजनितिका ह्रास होगा विज्ञान और अध्यात्म की जोडनेवाली कडी होगी साहित्य सत्साहित्य।

लेकीन आपकी अपनी मरजी—प्रतिष्ठा होनी चाहिये.

उस परम पिता परमेश्वरने मनुष्यको एक वडी देन (बक्षीस) दी है, वह है "वाणी" भाषा नहि इसलिये आप कुछ मौनका अभ्यास किजीये लीखिये कम, चिंतन मनन जादा कीजिए. जो सहज मिलेगा–निकलेगा ओही सार्थक होगा कारण सत्य अहिंसा प्रेम मौन और समता यह प. पू. श्री. जगतगुरु शंकराचार्य के रसायण है, वास्ते पढो सोचो समजो और वर्तो।



प. पू. राष्ट्रपिता श्री महात्मा गाँधीजीको याद करते हुए उनको जन्म शताब्दि निमित्ते श्रद्धान्जलि

पुत्र के हाथो पिताकी हत्या, इतिहासमें आश्चर्यजनक घटना है. इसी दुर्घटनाने भारतवासीयोको लज्जीत कर दिया है. सारा संसार जिस महापुरुषकी पूजा करता है, वह यूकि हमारा था. अतः हमने उसकी महानताको नहि समझा. और जब समझा तब बात हाथसे निकल चूकी है, एक ऐसी महान आत्माकी जिसने हमे जीवित रहनेका पाठ पढाया ऐसा, स्वयं हमारे ही हाथो जीवित नहीं रहने दी गई. एक ऐसा महापुरुष जोसने संसारमें अहिंसासे हिंसा पर विजय प्राप्त करनेका उदाहरण पेश कीया. उसीको हिंसा द्वारा "शहिद" बना-दिया गया.

एक ऐसा नेता जोसने हमारे पराधिनता के बंन्धन काट डाले हमारे ही हाथो स्वर्ग के बंन्धनोमें रहने को भेज दिया गया. हमारे लिये इससे बडी नालायको ओर क्या हो सकती है ?

हम आज जो कुछ है उनके बनाये हुये है, हमारी प्रतिष्ठा, हमारा नाम, हमारा कार्य, जो भी कुछ है, सब उसका दिया हुवा है. फिर हम कौन है, जो उस महान आत्माको श्रद्धांजली अर्पित कर सके ? हम तो अपना सर्वस्व भी उसके नाम पर न्योछावर कर दे तो भी कम है ।

जगतनीयंतासे प्रार्थना है कि:-हम उनके बताये हुए मार्ग सर्व धर्म समन्वय याने:-इदम सत्य सनातन पवित्र आदर्श युक्त सत पंथ पर चलनेको शक्ति प्रदान करे ।

धर्म हमारा यही हमेशां सतपंथीयों के गुण गाये ।
आत्मा उनकी को होलमील रही, सुख सदैव पहीचावे ॥
यह पुस्तक जो लेना चाहे, पलकी देर न लगाये ।
आप श्री. श्रीजीका पूर्ण पत्ता लीखकर घर बेठे बेठे मंगवाये ॥
छपवायेंगे अगर तो होगी, हित के बदले हानी ।
ठहरो, वांचो, सोचो, समजो, सत्य सनातन सतपंथ की बानी ॥



सत्य यही परमेश्वर

ईश्वर ही एक सत्य है, सदा रखीये ध्यान ।
तिहुसन उत्तम मानीये, है सत्य यही भगवान ॥ १ ॥
सत्य छिपावे नहीं छिपै न जानिय सत्य ।
अन्तर ईश्वर सत्य मह. है यह बात असत्य ॥ २ ॥
जानीय सत्य उपासक ही, है भक्तन सिर मोर ।
जीवन मुक्ति प्राप्ति कर, इही तजी मंत्र न और ॥ ३ ॥
सत्य इस तिहो प्राप्ति ही, कहत साध्य सब कोई ।
साधन तिहीकर दृष्टि मम, सत्य अहिंसा दोई ॥ ४ ॥
हय निर्दोष अहिंसा कही, लीजे निश्चय जानी ।
प्राणी मात्र प्रति द्वेष नही, है तिहीकर पहिचानी ॥ ५ ॥
निर्मल अन्तः करण माहि, जब जस होय प्रतित ।
सत्य तेही कह जानीये, साधक पूर्ण अतित ॥ ६ ॥
प्राण अहिंसा ही सत्य कर, नहीं असत्य कर लेश ।
नाही अहिंसा जासुजीय, है सो पशु नर वेष ॥ ७ ॥
त्यागी अहिंसा मार्ग नही, ईश्वर दर्शन हेत ।
नहीं इही मांही सपने हु मांही, दोष दिखाई देत ॥ ८ ॥
इश्वर दर्शन कर जतन, जग सेवाही जगमांही ।
कीहीसन हृदय न त्यागी सो स्वर्ग नर्क कोहु नाही ॥ ९ ॥
हरी नाम सम द्रव्य नही, कीहीसन शक्ति अपार ।
लहत विजय सर्वत्रसो, है जो इही आधार ॥ १० ॥
आत्मज्ञान उद्देष है, नर जीवन कर एक ।
सुत दारादिक दाइनी, खग मृग योनी अनेक ॥ ११ ॥
जीवीत सोही जा ही नारी, है जीवन कर लोभ ।
आत्मज्ञान बिन कलीयुगी, जब उपजावत क्षोभ ॥ १२ ॥



ॐ

ॐ नमो जयश्री तत्सत् हरि ॐ

धर्मस्य तत्व निहितम गुहायाम्, महाजनो येन गतः स पन्था।
इदम सत्य सनातन आर्य, पवित्रोत्तम आदर्श युक्तम् ॥

श्री. सतपंथ की जय

हृदयकी एक बातः—-जननी जणजे भक्तजन, कां दाता कां शूर।
नहि तो रहजे वांझणी, मत गुमावीश नूर ॥

प. पू. श्री सतगोर पात्र (लायक) ब्रह्मावतार ईन्द्र ईमाम-शाहजी ईनके:—अनेक शुभ वरदहस्त श्री सतपंन्थाचार्य महन्त गादी अधिपति साहेब. काका श्री रामजी लखमणजी।

आप प. पू. श्रीजीका शुभ जन्म स्थान गाम मु. पो. अरलमें ता. नखत्राणा डी. भुज. कच्छ प्रदेश (गुजरात) स्वर्ग समाभूमिमें हुवा था।

आप प. पू. श्रीजी के: - प. पू. पिताश्रीजीका शुभ नाम पेथाभाई था और प. पू. मातुश्रीजीका शुभ नाम मानबाई था. कुळ-छावैय्या था, और "जाति भेदा प्राक्तने, अतिव कालेः कच्छ कडवा पाटीदार, ज्ञातिमें समावेश वर्ण क्षत्रीयमें था।"

जो कीः—स्वदेश-भारत भरमें रहन-सहन, खान-पान और स्व-हक, स्व-कष्ट, कमाई से सात्त्विक भोजन आहार-व्यवहारमें उच्चतम, उत्साही, साहसी और एक दुसरेको साथमें सत्य अहिंसा और प्रेम करनेमें नंबर १ ला प्रथम है।

आप प. पू. श्रीजीने प. पू. मात पिताश्री और साथ सर्व सभी छोटी-बडी श्री सतपंथ, सनातन पवित्र धर्म जिज्ञासुसह जमात के उद्धार के लिये ही निमित्त मात्र भवः-तरीके जन्म धारण किया था, या किया होगा।



आंप प. पू. श्रीने क्षत्रिय वर्णमें से, ब्रह्मजाने, सो ब्राह्मण ब्रह्म जाने वही ब्राह्मण इस अैसे वेद विभाग युक्त उक्त-वाणीसे शोभायमान करके दिखां दिया. जैसा की-राजर्षि विश्वामित्रजीने साठ हजार वर्ष तक महान तपश्चर्या करके ब्रह्मर्षि पदको कमाई करी थीं, इसि. मुताविकः--

आप प. पू. श्रीजोने पूर्वजन्म कर्मानुसारिताः सहज स्वभावसे आप प. पू. श्रीजी के प. पू. पिताश्रीजोका शुद्ध सात्विक तुखुम तासीर ओर प. पू. मातुश्रीजीकी शुद्ध सात्विक कोख ओर दुध को धर्म ज्ञानसत्रके साथ उज्वल कर दिया हे. ओर पूर्णात्पूर्ण सत्य एवं श्रेष्ठ सृष्टि गोर ब्रह्म गादी, व्यास, ब्राह्मर्षि पर्णाको शोभायमान सम्भाल करके रखा, आभार स्विकार.

आप प. पू. श्री. जी पूर्वजन्ममें कोई योग-भ्रष्ट अैसे महायोगी जरूर होगे. ओही पूर्वजन्म के योग भ्रष्टताको पूर्ण योग योग्यता मिलाने के लिये "जननि जठरे शयनम" याने जन्म धारण किया होगा ।

आप प. पू. श्रीजीकी बालपणे की हकिकत मे अैसा सुना हे की-आप प. पू. श्रीजी बचपनमें स्वतन्त्रपणे चलने फिरने लगे इतनेमें एक सन्त नामे मालाजी श्रीजीके दरबारमें दर्शन करने गये थे, ओर उनको भेट दक्षिणा देकर सात प्रदक्षिणा करी. जब उन्होंने आप प. पू. श्रीकी बारेमें आगम (भविष्य) भाकित किया था की यह व्यक्ति आप प पू. श्रीजी (श्रीरामजी लखमणजी) हिमपुर (पिराणा) नगरी के दरबार (संस्था) के धणी मालिक बनेंगे. धर्माधिकारी महन्त बनेगें. इसी ऐसे विचारो से एक प्रथम पूर्वजन्म द्वारा 'योगः' कर्मसु कोशलम् 'योगक्षेम वहाम्यहम. अैसे महात्तम' श्री कृष्णं वन्दे जगद्गुरु की कृपा वाणीनुसार कला-कुशलतासे संवत १९३९ ओगणीसओ ओगणचालीस मिति. आश्विन वद अमावस्या रोज गुरुवार उस शुभ दिनांकको दुनियाके दैवी गुण सम्पत्ति के रखवारे धर्म



दुलारे, याने श्री सतपंथाचार्य महन्त गादि अधिपती काका श्री रामजी लखमणजी याने 'श्री रामजी वन्दे जगद्गुरु' बने.

ईदम सत्य सनातन आर्य पवित्रोत्तम आदर्श युक्त स्वधर्म निधनम श्रेयः स गत गंगा सहजमात के कुलतारण भव भय हरणं. गोवालिया राखणहार बने. समय जाते देर नहीं लगती और न लगी की योग योगानुसारीताः

आप प. पू. श्रीजी का शुद्धात्मा उस एक पूर्णातिपूर्ण जगत सर्जनहार. परम+आतमा=परमात्मा. परम पिता परमेश्वर मे संवत २०२५ दो हजार पच्चीस महा सुद १५ पुनम रोज रविवार ता. २-२-६९ ई. स. को विलिनिकरण करके ब्रह्मस्मिभूत हुवे. और अपना वशं-परम्परानुसार चलते आया हुवा शिरताज सभी संस्थान (दरगाह) का हक भावि पिढिके वास्ते—इदम सत्य सनातन आर्य पवित्रोत्तम आदर्शयुक्त श्री सतपंथ धर्मका चलता-फिरता लहेराता मानव देहधारी धर्म, ज्ञान-कोषधारी नाम निमित मात्र प. पू. श्री भगवा साधु काका श्री साहेब श्री सवजी श्री रामजी इनको सोप करके, वर्तमान जन्म विसर्जन कर दिया.

जगत-जनार्दन याने श्री सतपंथ सनातन आर्य पवित्रोत्तम आदर्शयुक्त जिज्ञासुओंको विश्वास है कि—

प. पू. श्री. सद्गोर नरपात्र ब्रह्म-विष्णु वंशावतार समा ईन्द्र ईमामशाहजीका अम्मर वारसा, "आचारे प्रभवोद्धर्म" प्रमाणे धर्म, न्याय, निति अनुसार धर्म, ज्ञान, सत्र, आप प. पू. श्रीजी के भावी प. पू. श्री गादी अधिपति याने श्री सतपन्थाचार्य महन्त कांकाश्री साहेब नाम निमित्त मात्र मान्यवर श्री सवजी श्रीरामजी धर्म न्यायानुसार शिस्त पालन करेंगे. घणीका शुभाशिवाद हो को जो सर्व शक्तिमान हैं।

आप प. पू. श्रीजीका देहावसान (दुनिया के परदे ओड)



होनेसे सर्वत्र छोटी, बडी, गोर, गत, गंगा सहजमात एकाद झाड के टुटे हुवे फल अथवा फूल जैसे जल बिना सूकने लग जाते है, तथा पाणी वगर मछली तलमलाती हैं वैसे हो गती को प्राप्त हुई थी, फिर भी दुनियाका गतिशिल जीवन रहस्य मयता के अनुसार पूर्वोक्त हो गयी.

आप प. पू. श्रीजी वेद, अथर्व और श्रीमद्भागवत–गीताजी चाणाक्य निति, बिदुरनिति, भ्रतृहरी शतक, पंचरत्न, गिता वगेरे. वेदशास्त्र, सम्मत इतिहासो के और श्री सतपन्थ शास्त्र साहित्य, सतवेणी' सदगोर शिखामण भाभाराम सुबोध आदि इत्यादि सत्साहित्य सागरके हंस थे वैसे हो, आचारे प्रभवोद्धर्म, प्रमाणे अदभूत आचार्य थे.

आप प. पू. श्रीजो सर्वगुण सम्पन्न गुह्यादगुह्य अैसे कुशल कारीगर और अनुभवी थे. ठोकरे खाये हुवे थे, और सच्चे पीर के मुरीद थे. ब्रह्मास्मि थे. पीर थे.

आप प. पू. श्रीजीकी कुशलता, चातुर्यता यह थी की--

आप प. पू. श्रीजीकी के पास दर्शनार्थी शरणार्थी चाहे वैसे देव, मानव, दानव, देवताई गुण रहन-सहन पोशाख-लिबासमें सामनें आते थे. फिर भी वह जो सामनेवाले दर्शनार्थी एव शरणार्थी आये हुये. विगेरेकी मनको गतिविधि भाव-भक्ति को पैछान तो अैसी करते थे कि जैसा विजलीका करन्ट होता है. वास्ते--

आप प. पू. श्रीजी सतपंथ सनातन आर्य पवित्रोतम आदर्श युक्त संस्थान (दरगाह) गाम पिराणामें एक महान "पावरमेन" शक्तिशाली मानव थे अैसा कहनेमें कुछ भी अतिशयोक्ति न होगी.

आप प. पू. श्रोजीमें महाव्रतधारी गुरू दत्तात्रेयकी समान चोवीस २४ ही गुरु के गुण ग्राह्यता थी.

आप प. पू. श्रीजी इस सत्य सनातन आर्य पवित्रोतम आदर्शयुक्त श्री सतपन्थ धर्म के साथ न्याय-नितिकी सत्य



अहिंसा और प्रेम को साक्षात ब्रह्म, विष्णु, महेश जैसी ही सत, रज, तम जैसी भी गुणात्मकरूप मय शुभ मंगल मुर्ति थी.

आप प. पू. श्रीजीका स्नान-सन्ध्या, पूजन अर्चन ध्यान, धारणा, जप-तप, तिर्थ-व्रत नियम, खाना-पिना, उठना-बैठना, चलना-फिरना इत्यादि सभी कुछ समयोचित था इसि बाबतो के:-

आप प. पू. श्रीजो कुशल कारीगर थे बने बनाय हुवे थे आरोग्य दृष्टिसे धन्वन्तरी थे. यह एक वह परम पिता परमेश्वर की तरफ से देन थी, या तो आप प. पू. श्रीजीका पूर्व सञ्चित-कर्म याने वर्तमान प्रारब्ध-कर्म था.

आप प. पू. श्रीजी के सामने जैसे वेद वाणी के सामने परचुरण=चिल्लर=छुटक शास्त्र-पुराण, वन-(वगडे जंगल) के अन्य पशु जाति शियालको तरह कुही कुही करके बोलते हैं, परन्तु वेद-केशरी के जागने पर उनके सामने सभी शियाल जैसे छुटक शास्त्र-पुराणोकी बोली बोलना बन्द होती है वैसे ही जो कोई:—

आप प. पू. श्रीजीके सामने-झुठा आडम्बर से मान-बड़ाई करने वास्तेः—कोई भी व्यक्ति आयी होगी तो उन सभीका गर्व, अभिमान, अहंकार आपसे आप हरण हो जाता था.

आप प. पू. श्रीजी के सामने किसी औरोकी न चली. और जो कुछ समयानुसार चली भी होगी तो वह कुछ विशेष ईन्सानियत से नही चली होगी. परन्तु हेवानियत से ही चली होगी, ऐसी ईन्सानियत और हैवानियत आदि शक्तियो के तत्सम इनकी द्वारा मिले हुये सुख-दुःखो के:—

आप प. पू. श्रीजी जन्मभर के सन्माननिय महेमान थे और रहे.

आप प. पू. श्रीजी अध्यात्मिक, आधिदैविक और आदि भौतिक सुख एव दुःखोकी भी त्रिपुटी जैसे थे इसीमे से—



परम पू. श्री. सतपन्थाचार्य महन्त गादि अधिपति
कै. काकाश्री रामजी लखमणजी
गादि स्थान—संस्थान-पिराणा
पो. गिरमथा, डी. अमदाबाद (गुजरात)
देहावसान ता. २-२-१९६९ ई. स.
मिति—महा सुद १५ पुन्नम रोज रविवार संवत २०२५



ॐ

ॐ नमो जय श्री तत्सत हरी ॐ



प. पू. श्री. सतगोर पात्र ब्रह्मा ईन्द्र ईमामशाहजी
और उनके पट्टशिष्य हाजरबेग
ग्राम—पिराणा पो०—गिरमथा
डी० — अहमदाबाद (गुजरात)



आप प. पू. श्रीजीके गुणानुवाद, गुणानुभव भाव आदि को बहुत ही कम संख्यावत जनताको समज थी.

आप प. पू. श्रीजी कभी चाहते तो पलभरमें ही हैवानियतको खलास, खत्म कर देते परन्तु--

परन्तुः--गरजुओके सामने चलती न कोई बात है ॥
मालुम यह होता है मुजे,-ईसमें भी खुदाका साथ हैं ॥

आप प पू. श्रीजी तो तत्सम सत्य, अहिंसा और प्रेम दया क्षमा शान्ति तथा इत्यादि सदगुणोके ग्राह्य थे, दूत थे पुजारी थे, और इसी बाबतमें:--

आप प. पू. श्रीजी को जगत-रूपी जनार्दन याने--

इदम सत्य सनातन आर्य पवित्रोत्तम आदर्शयुक्त श्री सतपंथ धर्म जिज्ञासुओंका पूर्णात्पूर्ण सहयोग था. सभी छोटी-बडी सहजमातका विशेष प्रेम था.

आप प. पू. श्रीजीको आदि भौतिक सुखो के बदले आदि-भौतिक दुःख विशेष रुपमें आकर मिलता था.कारण यह!कि--

आप प. पू. श्रीजीका जो गादि-स्थान है वह सूक्ष्म-दृष्टिसे देखना जाओ तो मालुम होता है कि-वह सही सलामत काँटेका बिस्तार है. भिष्म पितामहका शरपंन्जर हैं. अनन्त अनन्त असंख्यावत स. धन्यवाद के साथ साथ, अनन्त अनन्त असंख्यावत आभार-स्विकार है, अैसे इस भिष्मपितामह के शरपन्जर गादी अधिपति स्थान भोगनेवाले-इदम सत्य सनातन आर्य पवित्रोत्तम आदर्शयुक्त श्री सतपन्थ धर्म के साधु सन्त महन्त श्री सतपन्थाचार्यजी को. सत्य हक बात यह है किः--यह गादि स्थान ही. एक महान महत्पूर्ण साधु सन्यासि फकीर की गादी-स्थान है. और इसी गादि स्थानको भोगनेवालेका पूर्व-जन्म कृत-कर्म प्रारब्ध द्वारा प्राप्त किया हुवा-मिला हुवा. संन्यास.

याने--"लिया फकिरी" फिर क्या दिलगीरी ?

फकिरीमें मजा जिसको" अमिरी क्या ? बिमारी है. अच्छा



आप प. पू. श्रीजीको आदि भौतिक सुख खास करके किसी व्यक्तिकी और से न मिला, और किसी की तरफ से कदांच मिला ही होगा. तो वह सुख देनेवाली व्यक्तिकी नजर वैसे ही कि--जैसे कुत्ते की नजर मुर्दे की तरफ--मुरदार याने ?

किसीने ठीक ही कहा है कि-यह फानी दुनिया मुरदार है. और यह इस मुरदार फानी, दुनिया हरामकी चीज वस्तुओंकी आशा करनेवाला हि को कुत्ता कहाँ गया है. और अैसे-मेरे जैसे कुत्ते.

आप प. पू. श्रीजीकी तरफ देख देखकर वहुत ही भों-भों करके भोकते थे. तात्पर्य मन ही मन जलते थे. जिन्होंने कभी भी ख्याल ही नहीं किया होगा कि-यह पिराणा-धाम कौन से धणीका दरबार मकान है ? मालुमत होता है मुझे कि-किसीकी काशी और किसीको मका ऐसा ही यह हमारा.

इदम सत्य सनातन आर्य पवित्रोत्तम आदर्शयुक्त श्री सत पन्थ धर्म जिज्ञासुओंका धाम 'पिराणा' हैं. जो हिन्दु, मुसलमानो के लिये-ईन्सानियत की कुछ शिक्षा लेने जैसा है. मानवताका पाठ सिखनेका यह धाम 'पिराणा' है. और यह श्री सतपंथ जिज्ञासु मानव मित्र अल्प निद्रावश होंने के कारण ।

संभवामि युगे युगे "इस ऐसे 'कृष्ण' वन्दे जगद्गुरु" के वचन के अनुसार जाग रहे है, विचारकर रहे है. वास्ते यह श्री सतपन्थ धर्म जिज्ञासु मानव मित्र ऐसे अल्प निद्रावश होने के कारण कुत्तागुण युक्त है, और इनका नाम है 'मोतिया कुत्ता' कू कू करो तो आये और हड हड करो तो जाये. गले बांधी दोरडो जीधर खेचो (प्रारब्ध रूपी कुदरत) इधर जाये. कारण यह ईतना जानते हैं कि

दोष दयालजीने केम करी दिजे ? कर्ममां लखिया सो ही लिजे,

और इस मोतिया कुत्ते के गलेमें दोरी-रस्सी बांधनेका



कारण की--इससे कोई भी पागल कुत्ते जैसा-जहर न दे सके, यह कायदा है कि, जिस कुत्तेके गलेमें दोरी (पटा) है उसीको ज़हर देकर मारनेकी किसीकी भी हिंमत नहीं हैं. वैसे ही यह श्री सतपन्थ धर्म ज़िज्ञासु हाथीको माफक भी है इसि कारण--

आप प. पू. श्रीजी हाथी चला बाजार "और कुत्ते भुके हजार" इसी कहावतकी माफक हाथी जैसे भी थे, मस्त थे, बे फिकर थे. एक सच्चे पीर के बनाये हुए थे, सच्चे पीर थे. मतवाले मस्त फकीर थे. बे फीकर थे.

सच्चे पीरके बनाये हुए थे. बे फीकर थे फकीर थे

क्यो तनको धोये क्या हुआ, इस दीलको धोना चाहिए।
बाकी कुछ भी ना रहे बीलकुल ही धोना चाहिए॥
शील बनावो शीलकी ओर ज्ञान के साबुन सहि।
प्रेम पानी बीचमें, सब दाग धोना चाहिए॥
हिंसा, झुठ, चोरी ओर काम, क्रोध, मद. लोभका।
मेल, बिलकुल ना रहे, तुम्हे पाक होना चाहिए॥
इस दील खेतको करके सफा, पाप कंकर को हटा।
हरी नामका फीर इसी खेतमें, बीज बोना चाहिए॥
मुँहको धोती है बिल्ली, स्नान भी कौआ करे।
ध्यान बग कैसा धरे! ऐसा न होना चाहिए॥
श्री सद्‌गुरु प्रसाद से कहे...सुन लीजिये प्रेमीजन।
झुठे, गवारोंकों छोड दो, सच्चे पीर होना चाहिए॥

इसी असे कारण कहा है की......

भाई, अमने वहालो ईन्द्र ईमामशाह पीर।
भाई, अमने वहालो ईन्द्र ईमामशाह पीर...ध्रु० ॥

असे सच्चे पीरकी संस्थान (दरगाह) के हम सभी श्री सतपन्थ सत्य सनातन आर्य, पवित्रोत्तम आदर्शयुक्त धर्म और कर्म न्याय नीती के रक्षक (रखेवाल) कुत्ते जैसे है, और यह रक्षक (रखेवाल) कुत्ते श्री संस्थान (दरगाह) सतपन्थ सनातन आर्य, पवित्रोत्तम आदर्श युक्त धर्म, कर्म, वीर जीवासुओंकी



सेवा शुश्रुसा धणी के मारफत निमीत मात्र जब तक हो, बन सके तब तक श्री सतपन्थ सनातन आर्य, पवित्रोत्तम धर्म संस्थानको कोई भी प्रकारकी आंच नहि आयेगी. अन्यथा विशेष—कुदरत जाने, अच्छा, जैसा कोई पकाद चित्रकार (पेइन्टर) अनेक रंगोसे चित्रकी सजावट करता है वैसी ही सजावट

आप प. पू. श्रीजी की कुदरत यानें पूर्वकर्म संचित यानें वर्तमान प्रारब्धने करी थी की...जैसे हथोडा छन्नी के घाव सहन करे वगर पथ्थरकी बनाई हुई मूर्तिको आकार (देवताइ-पणा) नहि आता वैसे ही नैसर्गिक शक्तिरुप प्रारब्धने.

आप प. पू. श्रीजी को अनुभव को ठोकरे दे देकर महानु भवी बनाया था. बीलकुल ऐसे ही को श्री सदगोर कहेते है को—

इयळ भमरी पठनतरो लई मंदिरमां जाय ।
इयळ जो टचका सहे, तो आप समानी थाय ॥
महेंदी रंग देती है, पथ्थर तले पीसाने के बाद ।
ईन्सान सुर्खरु होता है, ठोकरे खाने के बाद ॥
महेंदी माहे रंग है, जाने सारा जग ।
पथ्थल तले पीसावे आप, तब लागे नवशा पग ॥

आप प. पू. श्रीजी को गती विधि ऐसी ही रुपमरुप हुई है.

आप प. पू. श्रीजी इस दुनियाकी परदे आड (अवसान) होने से श्री सतपन्थ सनातन धर्म जिज्ञासुओके दिलको पकदम धक्का पहोंच गया की सभी छोटी-बडी जमात नन्हे=मुन्हे बच्चेकी तरह माता विहोणा बाळ 'भिक्षुक' जैसी गती हुई थी. जैसा एकाएक दीवा बुझ जानेसे अंधेरा छा जाता है. वैसा ही श्रावण भादरवेकी रात जैसा ही उस समयका वातावरण याद आता है. सत्य हकीकत चैत्र सु....मिति...तारीख...के समय श्री सतपन्थ सनातन आर्य, पवित्रोत्तम आदर्श युक्त कच्छ कडवा पाटीदार मित्रोका संघ आता है. उसी समयमें तो बहुत ही



भयंकर सुनसान सन्नाटा आप प. पू. श्रीजी के गैरहजर होनेसे मालुम होता होगा. छोटी बडी और सहजमात हुसका दे देकर चीर स्मरणीय श्रद्धांजली अश्रुस्त्रोत के साथ आप प. पू. श्रीजी को समयोचितः-

करोमि यदत्सकलम, परस्मै, नारायणे 'समर्पयामि, रुपमें समर्पणविधि करती थी. आप प. पू. श्रीजी कच्छ कडवा श्री सतपन्थ सनातन धर्म जिज्ञासु पाटीदार संघ चैत्र सु....में गेर-हाजर आसन रथशय्या और रथको चलानेवाला ड्रायवर (बेलिया) बिलकुल निस्तेज असे थे. नोबत शहनाइ बजती होगी तो भी... आवाज गगनचुंबी गुंजारव करता होगा तो भी, सब नकाम जैसा ही मालुम होता होगा, निशान झंडा लहराता हो, (फरकता हो) धजा फरकती हो. फीर भी वह सभी आप प. पू. श्रीजी की गैरहाजरीका हो ढंढेरा पोटते होंगे और याद दिलाते होंगे की—

अय दिल दुनिया फना...इसमें लुभाना छोड दे,
चार दीनकी चांदनी...क्यु जुल्म पर बांधी कमर,
हुकम रब्बका मानले. दिलको दुखाना छोड दे—अय.

रोजा ढोलिया और कचेरी वगेरे सभी स्थले.
आप प पू. श्रीजी की याद करते होंगे...करते थे—

आप प. पू. श्रीजीका देहावसान शहेर अमदाबादमे-दिन माध्यान्य (दोपहरमें) १२-४२ बार कलाक बेतालीस मिनिट पर हुआ था. असा समय प्राप्त होते ही आश्रय कार्य कर्ताओने देश विदेशमें तार, टेलिफोन, रेडीयो वगेरे भौतिकवादकी मारफत खबरें जाहेरात करनेमें आइ थी. खबरे मिलते ही के साथ—

आप प पू श्रीजी की अंतिम यात्रामें सामिल होने के लिए दूर दूरसे करीब दो अढाई-सो-तिनसो-माइलोपर से याने सुरत, नवसारी, भरुच, भीमपुर, इस्मस, भाटाभाटपोर, घोलका, भावनगर, खेडब्रह्मा, हिम्मतनगर, मोडासा, कपडवंज [illegible]



शहेरो और शहेर विभागो के रहिस प्रेमी मानवमित्र धाम पिराना (हिमपुर नगरी) में जैसा श्रावन, भादरवेकी बरसातकी बुंदे गीरती है और नदी, नाला, भरपुर जलमें उभर जाते है वैसे ही जनसमुदाय जनमानव मेदनी शहेर अमदावाद से लेकर धाम पिराना तक उभरी हुई थी. लोक समुदाय उमट आया था. धाम पिरानाका यह दीवा (ज्योत) बुज जानेसे उसकी फ्रेम (देह) यथोचित जगह पर रखने के वास्ते एवं शेवटकी विदाय-गीरी देने के वास्ते महेमानगीरीमें सुंगधी द्रव्योको ईत्र, गुलाब जल. चंदन, अबिल, अगरबत्ती वगेरे की कुछ भी अछत (कमती) नहि थी. तरह तरह के फूलोका तो मानो के ढेर लग गया था.

आप प. पू. श्रीजी की सर-समाधी स्थान-कुमारिका स्थान धाम पिराना जो की—ईदम सत्य सनातन आर्य पवित्रोत्तम आदर्श युक्त स्वदेश भारतीय तीर्थोमें से एक "निर्वैर सर्व भूतेषु तीर्थ है. यही तीर्थ स्थानमें पवित्र भूमिमें जो की जहा पर पूर्व" विभाग (बाजु) में हाजर-बेग जाहेर परछा दैवी शक्तिका समाचार देता है और पश्चिम विभाग (बाजुमें)—

धीरधरी शास्त्राभ्यास करो श्री गोर नर नू नाम स्मरो ।
सदा सनातन सतपन्थ केरो झंडो ऊँचो रहेशे अमारो ॥

ऐसे झंडे के नीचे की. जहा पर—

आप प. पू. श्रीजी की समाधी स्थल उपर श्री हीरजी-भाई करसनभाई गाम-मानकुवा के रहिश डी. कच्छ-भूजवाले के तरफ से—

(गादीवाला काकाश्री रामजी लखमण संवत २०२५ ना महा सुद पुनमने १५ रवीवार देवलोक पाम्या छे. तारीख २-२-६९ ई. स.) और नीचे के भागमें लीखा है की—

(आ तकती बेसाडनार कच्छ भूज मानकुवाना घोरु हिर-जीभाई करसनभाई अने तेमना धर्म पत्नी) ऐसा लिखा हुआ है ऐसी शुभ मंगल जगा पर



आप प. पू. श्रीजीओकी श्री रामजी और लखमनजीकी जुगलजोडी हि. और साथमें प. पू. श्री लखमन करमसिंह और काकाश्री करमसिंह नथ्थु अैसी यह त्रिवेणी संगम सुमेळ हि. सही बात यह हि की—

आप प. पू. श्रीजी (काका श्री रामजी लखमनजी) ने त्रिवेणी संगमका त्रिविध ताप आध्यात्मिक आदि भौतिक और आदि देविक दुःख बहोत ही सहन कीया हि. वैसे ही बादमें उनको सुख सहुलियत भी आकर मीली हि. फीर भी वह अंतर बाह्य दृष्टिसे बहोत ही सतेज थे. यही उनकी पूर्वापार गत जन्मकी तपोबल निष्ठा और वर्तमान जीवनकी चातुर्यता कला, कौशल्यता सत, सबुरी अहिंसा, प्रेम और स्वाभिमानी पण की, कट्टरतापणे की जीवन जागती ज्योती थी. की जो हमारा गतीशिल जीवना-धारे समयानुसार तत्वमें तत्व रुपांतर करके विलिन हो गई. लुप्त हो गई. अह्म ब्रह्मस्मी हो गई स्वप्नवत हो गई और उनका सारा जीवन एक कहानी बन गई. बाह्य दृष्टिसे—

आप प. पू. श्रीजी नहि दीखते हो, परन्तु अंतर दृष्टिसे तो हुबेहुब कहो क्या बात है? अैसा प्रेम स्वर कानोद्वारा आनंद दे रहा हि. और एक गुह्याह गुह्य संदेश भी—
"महाजनो येन गतः सपन्था"—

आखीरी मुलाकांत

आप प. पू. श्रीजी की आखरी छेवटकी मुलाकांत ता... माहे...ई. स....मिति...रोज. हुई थी उस वर्तमान समयमें—

आप प. पू. श्रीजीको न जाने क्यों? और क्या वाते—

आप प. पू. श्रीजीने मेरे जीवन जिंदगीमें वैसे ही मेरे जीवन जिंदगी के "न भूतो-न भविष्यति' याने अथः से इति तक जो भी कुछ, था और होगा, यह सब कुछ बताया था-कहेना था-सुनाना था विगेरे लेना और देना था वह सभी तरीके से क चूलभूलेना देना हिसाब चुका कर दिया था, याने—



आप प. पू. श्री सदगोर मशाय पात्र (लायक) ब्रह्मा अवतार ईन्द्र ईमामशाहजी और उनके सुत. नरअलीमहमद-शाहजीके बाबतमें वैसे ही उनको आल और औलाद बंश परमपरा की बाबत...तत्सम...प. पू. श्री हाजरजामा गादी नशीन तक के वगेरे सभी बातोका इतिहास सार-असार जो भी कुछ भेदाऽभेद था, है, वह सब कुछ बता दिया-सुनादिया-नंतर-बादमें—

आप प. पू. श्रीजी की शेवट आखिरीका सुख-समाचार धर्म ज्ञानोउपदेश लेकर सच्चे घरकी--"साचा दीन रसुलका" यह ऐसा दीन-धर्मवाले घरकी धुन के साथ दुनियादारीका नाम निमित मायका घर कुटुंबमें पहोंच गया परन्तु आश्चर्य और अंचबेकी बात यह है की—

आप प. पू. श्रीजी तो परम पिता परमेश्वर के असीम कृपासे जो कुछ उसका साचा जुठा खेल रचाया हुआ है, उसी मुताबीक प पू. श्री कृष्णावन्दे जगद्गुरुकी वाणी अनुसार 'तद्धाम परम ममः' बहा पर निश्चित और निर्चित निर्विकार रुपसे रुपमें रुप विलिन होने के बाद भी वह प्रभु "सर्वत्र समाना"...ऐसा होने से—

आप प. पू. श्रीजीका डाल्डा के असली ? चाहे वैसा हो, फिर भी आप प. पू. श्रीजी जिसके साथ पूर्णतः प्रेम अनुभव दान दिया करते थे. ऐसा नाम निमित जैसा पंडित श्री शंकर-लालजी संपत अथर्ववेदी-खानदेश (काहुरखेडे) वाला-मु पो. हरताला तालुका (भुसावल) E. K. वाले के लिए कुछ प्रसादी देने की बाकी रह गई थी की...झट पट...

आप प. पू. श्रीजी धाम पिराना से To पंडित श्री शंकर-लालजी संपत अथर्ववेदी को C/o मुखीश्री साहेब शामुकेशव (चौधरी मु. विटले पो. पेनपूर ता. शवेर E. K. अंतर अंदाजे सरासरी (लगभग) ६०० (छसो) माईल उपर मेडी पर आकर रातके दो बजे मिले आभार स्वीकार--



तोबा असंख्य बार, आ बंदा गुन्हेगार–आभार–स्वीकार—

आप प. पू श्रीजीका इतने दूर आकर मिलनेका कारण–एक समयमें इसी वर्तमान विचार दर्शकने 'भावोपहत स्वभाव' होकर खानदेश आदि देशके लिये.

आप प. पू श्रीजी को श्रीमानजीकी ईच्छाधिन आमंत्रित किया था, परंतु वह आमंत्रण हमारे (मेरे) पूर्व जन्मकृत संचित कर्म याने वर्तमान प्रारब्ध भाग्य वह अभाग्य पणेसे

पूर्वजन्मनो भाग हमारो, संच पहेलो, ऐसी मुताबीक ऐसे सच्चे उपदेशानुसार—

आप प. पू. श्रीजी की तरफसे नहि, परन्तु पूर्व खानदेशकी ही कोई अन्य व्यक्तिगत व्यक्तिकी तरफसे पूर्व खानदेशका आमंत्रण रद बातल कर दीया गया. और दिलकी बात दिलमे रह गई. शायद––इसी बात अनुसार क्यों न हो? की इसी वचनको पुरा करने के लिये ही—

आप प. पू. श्रीजी उपर लिखे हुए पत्ते पर मान्यवर श्री साहेबजी के वहाँ पर आकर मिले. दर्शन दिया. आभार—स्विकार पुनः पुनः

आप प. पू. श्रीजीका ऐसा एकाएक अकस्मात दर्शन लाभ (अमुक तारीखको) होने से यह—

आप प. पू. श्रीजीका आत्मवत, आत्मप्रिय जैसे की दिलमें, मनमें, तन बदनमें, बीजली पावर, करंट, जैसा ही कुछ भ्रम सा हो गया था, की झट पट उसने भी सच्ची बात क्या होगी? ईस सवालका जवाब मिलाने के वास्ते जो की–२६ (छब्बीस) रमजान के यात्राळुओकी ग्रामोग्राम जाकर और गली गली, दर, दर घुमकर व्यक्ति व्यक्तिको प्रश्न करना चालु किया तो जवाब मिलता रहा की–हम लोक पिराने (ईमामपुर) यात्रा गये थे. जब तो प. पू. श्री काकाश्रीजी की तबीयत तो अच्छी, भली, चंगी थी. तो फीर ऐसा कैसा हुआ?

तात्पर्य... ऐसा कभी भी नही हो सकेगा और आप (प्र



समाचार) जो कुछ बता रहे हि, वह सब गलत तरीका है. कारण स्वप्न कभी कीसीका इस अैसे हळाहळ कलयुगमें सच्चा कैसा हो सकता है ? गलत बात है परन्तु इस समाचार लेखकको कुछ खबर न होने से यह व्यक्ति (विचार लेखक) स्वयं स्वत: खुद ही कुछ यात्रीओंको साथमें लेकर ता...मा... ई. स...मिति...रोज...को.

आप प. पू. श्रीजी के पवित्र पूज्य पावन भूमि (गुजरात) में अमदाबाद गिरमथा पिराना की कुंवारी धरतीमें आया की..वहा तो संस्थानमें इस कुछ वर्तमान विचार विनिमय लेखक को तो खुब सन्नाटी...अंधेरा..दिलमें तो प्रथम हुआ था की..वहाँ पर भी ओही गति "गति सा मति:"

होनहार, जो जैसा करे और जो जितना करे ।
भलाईका भला फल हि, बुराईका बुरा फल हि ॥
बुराई जो करेगा सो, बुरा फल क्यु न पावेगा ।
भलाई जो करेगा सो, भला फल क्यु न पायेगा ॥

प्रभु तेरी लीला अपरमपार हि...

प्रभु तेरी अकळीत माया रे.. तेरा भेद कीसीने नहि पाया
जो समजा सो हुआ दिवाना...मुरख सो डाह्या.
तुज से मिलिया सबसे बिगडा...यह कैसा रंग रंगाया—=प्रभु०
सत चले सो सबका वैरी...पांखडी शीर छाया,
ज्ञानी की कोई बात न माने...जुठे ने जग भरमाया...प्रभु०

आप प. पू. श्रीजी को याद करते हुए...(अपूर्णांक)

—आपका एक



१ 'एक घटना'

याद है ना आपको वह घटना?

सर वोल्टर रेले लंडन टावरमे कैद थे. उनका ईरादा हुआ कि इस फुरसदका फायदा उठा कर "संसारका इतिहास" लिख डाले. तभी खिड़की के नीचे शोर गुल सुनाई दिया. झांक कर देखा तो दंग रह गये. एक आदमी दुसरे आदमी पर घातक प्रहार कर रहा था.

जेलरो से पुछा कि--मामला क्या है? कोई कुछ ठीक ठीक न बता पाया, सर वोल्टर हताश हो गये, अपने आप पर ही झल्लाहट आ गई, बोले-जब मैं सामनेकी आंखो देखी घटनाका रहस्य नहीं पता लगा पाया तो अतितका "विश्व" का इतिहास क्या खाक लीख पाँउँगा?

मित्रो- फीर भी इतिहास लिखे गये हैं. लिखे जा रहे हैं. लिखे जाते रहेगे. शोध, खोज, श्रम, तटस्थ वैज्ञानीक वृत्ति तथा जीवन और जगतके व्यापारोकी अंतर दृष्टिका जीतना अधिक बल जीस ऐतिहासीक कृतिको मिलेगा, वह उतनी ही अधिक प्रामाणिक होगी.

इसलिये इतिहास के लेखन और अध्ययनका 'प्रयोजन' है 'इतिहास' एक छोर पर उसे भविष्यकी निर्माणकी उपादान सामग्री के रुपमें प्रस्तुत करता है.

इसी प्रकार यह हमारे जातीय और अन्तर्जातीय जीवन समझने सवारने का महान साधन है.

हमारे देशमें 'इतिहास' को इससे भी अधिक व्यापक संदर्भमें देखा गया है.

उससे जीवन धर्म दर्शन और साहित्य के समवेत रुपमें प्रस्तुत किया गया है. इतिहासकी एक परिभाषा है.

धर्मार्थो काम मोक्षाणा मुपदेश समन्वितम्
पूर्ववृतम् कथा युक्तं इतिहास प्रचक्षते



इतिहास वह है—जीसमें परंपरागत वृत्तांतकी कथा हो, और धर्म अर्थ काम और मोक्ष यह चारों पुरुषार्थका उद्देश हो.

२ मंजिलकी विषयमें

हे मानव मित्र—शास्त्रग्रंथ विलोकन करने से मालुम हुआ है की प्रथमतः यह आवश्यक है कि चलने से पहले हमें अपनी मंजिल के विषयमें खुब सोच लेना चाहिये. बिना उद्देशसे चलना, चलना नहीं है किन्तु भटकना मात्र है. हमें एक समय खुब सोचकर अपने ध्येयको निश्चित कर लेना चाहिये. और उसके उपरांत औसे साधनोकी खोज करनी चाहिये जीसमें हमें अपने लक्षको प्राप्त करनेमें सफलता हो. एक बार निश्चय कर लेने पर फिर उसे छोडना नहीं चाहिये. गीरते पडते लक्ष पर बढते जानाही हमारा ध्येय होना चाहिये. संसारमें अनेक महा-पुरुषों के उदाहरण मिलते हैं कि--

जिन्होंने निरंतर चलते रहने के कारण नाम कमाया है. वे अपने लक्षमें तो सफल हुये हैं, यदि हम ध्यानसे देखे तो संपूर्ण जगतका 'इतिहास' एक प्रकार से महान पुरुषों के जीवनका ही 'इतिहास' है. यदी मनुष्यमें आगे बढनेकी लालसा न होती, तो वह कभी भी इतना आगे बढ सका न होता. वस्तुतः मनुष्य जीवनकी सार्थकता और सफलता गति=शिलता में ही है. इसी वास्ते सोच समजकर चलनाः—

रे मानव— इस तुच्छ देह के उपर, जरा नही तू इठलाना 'घृ'
,, संसारीक सब मरणशील है, जी में दर्द नहीं लाना–१
,, तू है बीच बडे आर्यों के, जरा नहीं तुम घबडाना–२
,, लोभ,काम,मद,मोह,छोडकर,अपना काम कीये जाना–३
,, कभी प्रेम लेना चकोरका, कभी ध्यान धरना तनका–४
,, पर सुषमामें पडे कंटको, भी तुम भुल नहीं जाना–५
,, कितना भी हो रहा कष्ट, सभी एक साथ सहते जाना–६
,, जीवनकी पतझड बेलामें भी, विचलीत मत तू होना–७
,, तुम पर ही सब निर्भर है, सीखो बढते ही जाना–८



,, इस जगमें कोई बंधु नहीं है,दुश्मन भी तेरा कोई नहीं-९
,, सब व्यवहारोंसे होते हैं, तू सोच समझकर चलना-१०

३ " आत्मनो मोक्षार्थं एवं जगद्धिताय च "

हे मानव मित्रोः—मनुष्य देह नश्वर है. और जगतमें कोई भी चीर स्थायी नहीं. फिर भी जब तक जगत है, तब तक सद्-गुणोका आदर सत्कार होता ही रहेगा. इसलिये कि-यह चीर स्थायी है.

प्रतिभा सदां सर्वदां आदरणिय और पूजनिय मनायी जाती है. सत्य यह है की प्रतिभावाले मनुष्यों ही प्रकृति-देविके सूक्ष्म चित्त के परिचायक और हर एक मनुष्य को आदर्शरूप है.

प्रतिभामें दैवी शक्ति है, और यह शक्ति समस्त ब्रह्मान्डमें प्रसारीत है.

जीवन-वृत्तान्तकी समालोचना उपर लोक शिक्षणका मुख्य आधार है. करूणाकी प्रतिमूर्ति पुण्यशिला और सत्यमार्ग-दर्शक

"सनातन स्त्वं पुरूषो मतोमें" श्री सतगोर पात्र ब्रह्मा ईन्द्र ईमामशाहजीके जीवन चरित्रमें से बहुत कुछ सिखने लायक मिल सकता है. जिन्होंने विश्व व्यापि प्रेमरूप, चिद्शक्ति का पुरस्कार प्राप्त किया है. उन्होंकी जीवन की समालोचना करना यह महत् पुण्यका काम है.

महापुरूष और नारी रत्न जैसे जन्म ग्रहण करते है. उन्होंमें और साधारण मनुष्यमें एक ऐसा भेद देखनेमें आता है कि वह जो कुछ बोलते है वैसा कर सकते है. उनके वचन यही उनका यथार्थ जीवन है.

सामान्य मनृष्य बहुत बहुत शास्त्रादिकका अध्ययन करके मात्र सारयुक्तः उपदेश ही दे सकते है परन्तु स्वतः का जीवन वह महा पुरूषो जैसे. प्रतिबिम्बित कर सकते नहीं. जब महा-पुरूषो तो ऐसे शब्द पांडित्य के बदले कार्य पांडित्य को ही पसन्त करनेवाले होते है.

वह महापुरूषो तो जगतका कलगाण (भला) करने के लिये



तत्पर रहते है. वह मनुष्य जाति के उन्नति के लिये अलग अलग रस्ते निकाल सकते है, और उसी रिति से चलने के लिये लोगोको उपदेश देते है. दूसरे के उपर स्वत: की उपदेश की बराबर सच्चोट छाप पडे इसलिये:–वह स्वयं-स्वतः उसी कहे मुताबिक वर्तन करते है. वह साधारण मनुष्यकी तरह सिर्फ सुख-दुःख के विचारमें और हास्य रूदनमें ही स्वत: का अमूल्य जीवन व्यतित करते नही. जीवन के प्रथम भागमें ही. वह स्वजन के दु:ख और न्युनताओंको देखकर अत्यन्त दुःखी होते है. और जगतकी भी ऐसी ही अवस्था है कि क्या? यह समझने के लिये अधिर हो जाते है, और इसीसे उनका विशाल हृदय विशेष जादा विशाल होकर धीरे धीरे समग्र जगतमें व्यापक हो जाता है.

और कोई भी खास करके केंन्द्रमें बन्धे हुवे रहते नहीं वह तो शुद्ध अन्तःकरण से सभी जगतको कल्याणमयी इच्छा भावनाये रखते है और स्वतः से जगतको भिन्न मानते नहीं.

"आत्मनः प्रति कुलानि परेषां न समाचरेत"

अर्थातः--जो आचरण अपने को प्रतिकुल होता है, वह वैसा दुसरे के प्रति आचरण कभी करते नहीं. सत्याचरण विधिका हो वह प्रथम "आत्मनो मोक्षार्थ एवं जगद्धिताय च कर्म करते रहते है.

४ पुरांणांक इतिहास

भुत, वर्तमान और भविष्य इन त्रिकालको समझनेवाले ही समझते है, और उनको ही त्रिकाल-दर्शि कहां जाता है. जो कि श्री. सतपंथ-मार्गदर्शक.

प. पू. श्री. सतगोर पात्र ब्रह्मा ईन्द्र ईमामशाहजो के काव्य संहिता के अनुसार.

ॐ ॐ ॐकार श्री. सर्व प्रथम से उस आद निरंजन निराकार तेज=वही नर-आकार विष्णू वंशावतार पात्र (लायक) अवतार=अव+तार अव=अवनी+तार=तारनेवाला, तारणहार ईस अवनो=भुमि उपर आकर तारनेवाला तारणहार वह



है 'अवतार' उपरसे निचे आना, निर्गुणमे से सगुणमे आना, वैकुंठमे से मानवमेदनी (मृत्युलोक) में आना. परन्तु, "अव जानान्ति मां मूढा, मानुषितनुमा श्रितम्" याने त्रेतायुगी सातवे विष्णू वंशावतार श्री रामचन्द्र प्रभुका अनादर एक धोबोने किया था. और वैसे ही द्वापार युगी आठवे विष्णू वंशावतार श्री कृष्णचन्द्र प्रभुका अनादर शिशुपालादि अन्योन्य मूढमति (दानवो, नराधमो) ने किया था. जैसे वैसे ही आज वर्तमान कलियुगमें भी. द्वापार युगी विष्णू वंशावतार पात्र नवमे बुद्धावतार को तो पहिचाना ही नही. तो फिर इस वर्तमान कालियुगी वह आद विष्णू वंश अवतार पात्र 'श्री निष्कलंको नारायण जनार्दन का अनादर करनेवाले मानव-रूपमें घुमनेवाले दानव-नराधम असुर स्वभाववाले, मूढ, मुर्ख बहुत ही है. तो "परित्राणाय साधू नाम्, विनाशायच दुष्कृताम्" उसिमें वह परम परमेश्वरका कुछ दोष अथवा स्वार्थ नही.

निर्दोष और निःस्वार्थ भावसे अनेको उपाधियोंमें पडे हुवे मानवका स्व.कल्याण कैसा होगा ? जवाबमें कहे जाता है कि मनुष्यने वह परम परमात्माकी कथा, किर्तन द्वारा उस लिलामयकी लिलाको समझने की चेष्टा करे.

उस लिलामयकी लिलाओंकी कथाये पवित्र से भी पवित्र मानी जाती है. संसारकी उपाधिका झटका (घां) लगा हो, तो तब हरीकथा रूपी मलम पट्टी ही उस उपाधिरूप घाव पर लगाने (बान्धने) के लिये एक महा-दवां के समान रामबाण यही (अवतार पात्रोकी हरीकथाए) लाभदायक है.

द्वापार युगी वह आद विष्णू वशांवतार पात्र आठवे (८) गिता गायक "कृष्णं वन्दे जगद्गुरू" का आश्वासन है कि:— "संभवामि युगे युगे" यह उद्गार वह परम कृपालू कृष्णं वन्दे जगद्गुरू के है. और इस वैखरी को न समझनेवालेअगर तो समझकर अमलमें न लानेवाले को याने न माननेवालेको ही उस "कृष्णं वन्दे जगद्गुरू" ने

"अवजानन्तिमां मूढा, तनुमाश्रितम्" याने ईस मेरे अवतार धारण किये हुवे, मनुष्य (अवतार) रूप को न समझनेवाले



वही मूढ मुर्ख है। और "विनाशाय च दुष्कृताम" याने इन अवतार पात्रकी विरोधिओंको ही दुष्कृत्य करनेवाले दुष्ठ, राक्षस नराधम चंडाल है, और आखिरमें इन अैसे सभिका नाश होनेवाला है.

वह प. पू. दयालू दाता "संभवामि युगे युगे" बचन दिंया करते है. और इन विश्वासु मानवो के खातिर हर हमेशा आया करते है. और बाद नंतर भविष्य के लिये फिरसे आश्वासन देकर चले जाते है. और ईस वचन को जो भूल जाता है तो उस (भुले हुवे) को ठिकाणे पर लाने के लिये साक्षात प्रथम वेदाचार्य प. पू. ब्रह्माजी सतगोर पात्र वेदाचार्य वेद वशिष्ठजी, प. पू. श्री सतगोर पात्र वेदाचार्य वेदव्यासजी, परब्रह्मरूपमें आये हैं और अब भी है. है. और है. परन्तु, बहुत ही अचंबे की बात है, उन (श्रीहरी) के वचन उपर भरोसा, विश्वास न करने वाले के लिये उन (श्रीहरी) का कथन ठीक ही है की—

"उत्क्रामन्त स्थितं वापि, भुंजानवां गुणान्वितं ।
विमूढा नानू पश्यन्ति, पश्यन्ति ज्ञान चक्षुक्षां ॥"

आत्मा शरीर के साथ रहकर, मय ईन्द्रियोंके साथ भोग भोगता हैं, खाना-पिना, चलना-फिरना, सब कुछ कर्म करतां हुवां, तो भी मूढ, मुर्ख उस शरीरधारी आत्माको पहचान सकते नहीं. यह तो जिसको ज्ञानचक्षु है "अध्यात्मज्ञान नित्य त्वम्, तत्व ज्ञानार्थ दर्शनम्" हो वही देख सकता है, वास्ते, यह अैसा "तत्वज्ञानार्थ दर्शनम्," होना यही जीवनका ध्येय होना चाहिये.

यह जीवनका ध्येय साध्य करने और अवतार पात्रको पहचानने के लिये एवं भक्तिभाव दृढ करने के लिये वेद, शास्त्र, पुराणोका सहारा (सहमत) लेना जरूरी चाहिए. कोई कहेगा की वह वेद, शास्त्र पुराणोका सहारा (सहमत) तो लेना आजभी प्रचलित है. क्या आज वर्तमान समयमें लोक वेदशास्त्र पुराणोंको नहीं पढते पढाते? परन्तु—

हे मेरे मानव मित्रो वेदशास्त्र पुराणोका अध्ययन पठन-पाठण तो दुनिया लोग आज भी बहुत करते और करवाते हैं. पण उसीमें विशेष तो अैसा ही भाव भरा हुवा है कि—जो



उनकी आचरणसे विदित होता है वह कोनसा? और कैसा? जवाबमें वह अैसा है देखो सुनो,

"अशास्त्र विहितं घोरं, तप्यंन्ते ये तपोजनः ।
"दंभ, अहंकार स युक्त, काम राग, बलान्वितम् ॥

अैसा यह तप रखोळीकी अन्दर छुपे हुवे अग्नि के समान है. इसलिये काम, क्रोध, लोभ मोह, मद, मत्सर, आदि द्वेश भावनाए बढती रहती हैं.

ऐसे तपमें जबतक तप करो, तबतक योगिराज जैसे और तपकी सिद्धि होते ही असुरी स्वभाव छलकने लग जाते है. मानो के—

हिरण्यकश्यप तपमें, बलमें, सम्पत्ति और सत्तामें अजोड था और उसीने वैर घटाने के लिये नहीं, परन्तु, वैर बढाने के लिये तपादर किया था.

बेद, शास्त्र, पुराणो और भाविक सन्त, महन्त साधुओंका कहना है की जप. तप, तिर्थ, व्रतादि के आचरणको ही धर्मांग (आचारे प्रभवो ध्दर्म) अंग कहा गया है, यह सब धर्म के अंग याने क्रोध के बदले अक्रोध, अपकार के बदले उपकार, दंड के बदले क्षमादि कहे गये है परन्तु होना चाहिए. शास्त्रोक्त अशास्त्र नहीं. इसी वास्ते क्या कहा है कि—

जप, तप, तिर्थ, व्रत, उपवासी (पण) मुळ न जाने सो अन्धाजी,
वेदशास्त्र कहे नेम करवुं सही...(सतपन्थ, ज्ञान, साहित्य.)

आज कलके तप तो बहु धा. श्री सतपन्थ शास्त्र के विरोध (विरोधाभावसे) असुरी भावसे भरे पडे हुवे दीख पडते है. अच्छा अब अवतारपात्र की कथा लेंगे.

नमोस्तू ते व्यास विशाल बुद्धेः—यह विशाल बुद्धिवालेने वेदो के विभाग करके सुन्दर एवं विविध रचना करके अलग अलग वृक्षोकी डालियो जैसी. मानवो को अलग अलग (रूचि स्वाद के लिये) भावयुक्त विशेष ख्याल रखकर सामान्य जनतामें उच्च शिक्षाका संस्कार होने के कारण अठराह पुराण लिखे है.



वन्दे महापुरूष ते चरणारविंदम् ॥ १ ॥
ततः कलौ स प्रवृत्ते, समोहायं सुरद्विषाम् ।
बुद्धो नाम्नाऽजनसुतः किकेटषु भविष्यति ॥

अर्थातः--किकट देशमें असुरोंको मोह निर्माण करनेवाला बुद्ध नामे भगवान अवतरेगा ऐसा प. पू. श्री सतगोरपात्र ब्रह्मा वेद व्यासजीने लिखां, तथा प. पू. श्री शुकमुनिजीने राजा परिक्षीति प्रति कहां, वैसे ही नैमिषारण्यमें अठयासि सहस्त्र ऋषियों के सन्मुख सुतपुराणीकी तरफसे प्रति पादित किया गया, और इसी तत्व को उस वखतमें सभी ने वगैर 'ऑपरेशन' स्वीकार किया. फिर भी अपने आप. (श्री सतपन्थ) नास्तिकोने उन (प. पू श्री वेदव्यासजी को नास्तिक कहकर श्री बुद्धावतार को मानना नहीं, ऐसा कडी कोट ठोस दिया.

ब्राह्मण पंडीत पुराणीओंको पुछना की वेदव्यासजीको मानते हो? तो कहेंगे कि जी...हां. क्यों नहीं मानेगे ? नमोस्तुते व्यास विशालबुद्धे, ब्राह्मणोको पुछना के क्या आप ब्राह्मण, वेदव्यास-जीके पुराणोको मानते हो ? तो कहेंगे की जी...हां परन्तु इसीमें से इतना ही मानने को तयार नहीं. कारण ? स्वभाव इस भाव (स्वभाव) को घडण करनेवाला एक मात्र गुण है. स्वभावकी घडण गुणोसे होती है. सत, रज और तम, यह तिनो ही गुण स्वभावको घडते है, इसीमें विकृति आती है. तब प्रथम स्वार्थ आकर खड़ा होता है. एव इस स्वार्थका धक्का पहुँचते (लगते) ही, इस स्वार्थ के उपर खड़ा रहनेवाला गिरने लग जाता है. वाद क्या ? बाद. नंतर क्या ? बादमे जमिन दोस्त ही है.

(१) ब्राह्मण=ब्रह्मको जाननेकी ताकाद रखनेवाला भडवीर "ब्रह्म जाणाति ते ब्राह्मणः" ब्राह्मण=ब्रह्म तेज छलकनेवाला, महासागर. शमो, दम, शौचका इजारदार.

(२) ब्राह्मण=निर्ममो, निरहंकारो, निस्पृहि एवं निपरिग्रह ऐसा ब्राह्मण इसी जगतका मालीकी हक वह परम परमेश्वरकी तरफसे वंश परंपरांगतको भोगने के लिये अधिकार लेकर आये थे,



" यद किञ्चित जगत्याम जगत " यह सब कुछ ब्राह्मणोका ही था. परन्तु, कुदरत के पास जो कायदा है वह बहुत ही अच्छा है. कि नालायकको वारसा हक नहीं मिलता

थां ब्राह्मण रावण, जाने दुनिया सारी परन्तु,
मद्य, मांस एवं परस्त्री के कारण. राक्षस हुवां था भारी,

यह रावण तपोधारी होते हुवे भी ब्रह्म के बदले ब्रह्म राक्षस कहला गया.

राजपुत्र गादीका वारस (हक) दार होता हुवा भी नालायक निकले तो? गादी मिल नहि सकती. और मिल सकती है तो भोग नही सकता. यह है कुदरतका न्याय वाहवा रे वाहवा.

ब्राह्मण=उदार भावी, ब्राह्मण याने विशाल दृष्टिवाला. परन्तु उदार भाव घिस गये और विशाल दृष्टि लुप्त हो गई. और " आत्मवत् सर्व भूतेषु " की पहिचान मिट गयी यज्ञ को निमिते हिंसामें प्रवृत्त हो गये. और ब्रह्म तेज मिट गया. तब श्री बुद्ध भगवान आय पहुँचे और जगतमें प्रवृत्त होता हुवा हिंसा धर्मकी जड़ निकाल कर जगतको सुखी करने के वास्ते पंडु पुत्र युधिष्ठिर उर्फ धर्मराजको बोध करके. श्री सनातनार्यावर्त मानव-सेवा धर्म मार्ग याने मानवता भरा हुवा श्री सतपन्थका सम्बोधन किया. परन्तु फिर भी ब्राह्मण देवताओंने स्वयं-स्वार्थ को वीसना बन्द और सत्यको सहन न करके और परम पूज्य श्री भगवान वेदव्यासजी के सामने भी वाद विवाद करके, उनकी बुद्धिको नास्तिक कहकर निन्दा की. परन्तु, ब्राह्मणत्व भरा हुवा, उदार भावी श्री बुद्ध भगवान अवतार पात्र को हिन्दु सनातनार्या वर्त के धर्म शास्त्रांगमें समभावो किया होता तो आज का भारत कुछ जुदाही (दुसरा ही) मालुम होता परन्तु.

हे प्रभू तेरी लीला अपरंपार है.

श्री. सतपंथीयो ! जब नववा (९) अवतार पात्र बुद्धावतारका. कोई इतिहास कोई अन्योन्य जगह पर प्रगट मालुम नही पडता और उनको नामसे कथा-किर्तन नामका जयघोष सुनाई नही



देता, तो फिर इस वर्तमान कलीयुगी भगवान श्री निष्कलंकी नारायण जनार्दनको एक श्री सतपन्थ मान्यवर वगैर कोन उनकी नामसे भजन, पूजन, अर्चन ध्यान धारणा विगेरे करेगा !

बोलो—श्री निष्कलंकी नारायण देवकी जय.

५ सर्व. स्व. धर्मोन्नति के लिये एक विनम्र प्रस्तावः—

प्रथम विषय—सनातन धर्मावलंबी एवं आर्य समाजीओंमें मत भेद है. हर वखत शास्त्रार्थ भी किये गये. लेखबद्ध प्रश्नोत्तर द्वारा भी आंदोलन हुवा. परन्तु आज दिन तक सन्तोषकारक कोई निर्णय हुवा नही. दोनो दल, पक्ष वेदानुयायी है. दोनो पक्ष वेदको समझने के लिये ब्राह्मण ग्रन्थोसे लेकर, श्रुति, स्मृति, शास्त्र, पुराणो, इतिहास, रामायण, महाभारत ई० ग्रन्थोंकी सहायता लेते है. तद्दत ईस ग्रन्थोसे प्रभावित होते है. परन्तु शोकको बात है कि, कितने एक विषयोंमें उन्होमें वाद-विवाद चलता आ रहा है. जीससे हिन्दु जातिका वातावरण कलुषित रहता है.

(२) चीरकालसे यह दास ईस विषय उपर मनन और बिचारकर रहा था अनेक पुस्तक, अनेक ग्रन्थोंका अवलोकन किया, इसीसे जो विचार मेरे दिलमें उत्पन्न हुवे है, वह मै इन दोनो पक्षावलंवीयोंके सन्मुख रखता हूँ. और...

(३) आशा रखता हूं के वह पक्षपात छोडकर ठंडे दिलसे इसके उपर बिचार करे, और जो भाव ईनके मनमें मेरे इस लेखसे उत्पन्न होंगे वह प्रगट करे. जिससे पक्षपाती मनुष्यको खबर पडे की सत्य क्या है.

(४) अैसा करनेका मेरा उद्देश यह है कि—सनातन धर्मी और आर्य समाज भाईयो दोनो मिलकर स्वतः के मत-भेदोको वेदादि सच्छास्त्रो द्वारा निर्णय करके एक सिधान्त उपर आवे.

(५) मेरा हार्दिक भाव यही है कि, अब अपनने मिल जाना चाहिये. वाद-विवादका अब समय नहि. जो जो सिद्धान्त उपर इनका मतभेद है इसी सन्धि पर मैंने यथाशक्ति विचार किया



है, और अब यथावकाश इस विचारों को "वैदिक" धर्म द्वारा प्रकाशित करके आशा रखता हूं के---

(६) मेरे से अधिक विद्वान बन्धुओं, इसके उपर अधिक प्रकाश डालनेकी कृपा करे.

(७) यह काम निःसन्देह विद्वानोका ही है. मेरे जैसे तुच्छ बुद्धि अल्पज्ञ पुरूषों के लिये यह, साहस करना हास्यास्पद बन सकता है. जैसा--

(८) एक बुंन्दकी देखा देखी समस्त बादल खेतमें गिर गया था, तैसी मेरे जैसे सामान्य जनकी त्रुटियो निरीक्षण कर (देखकर) कोई समर्थ विद्वान महानुभव स्वतः को लेखणी उठाने की कृषा करेंगे, ऐसा समझकर यह तुच्छ बुद्धिदास यह साहस करने वास्ते उद्धत होता है.

मनुष्य जीवनका अध्ययन करने से समजमें आता है की प्रत्येक मनुष्यकी अन्दर कुछ न कुछ भाव प्रधानपणे विद्यामान होता है, यही भाव इसके समग्र जीवनको बनानेवाला एवं चलानेवाला होता है, अनेक समान भाववाले समूह (संघ-संघठण) का नामजाति है. याने जातिमें भी कोई भाव विशेष रुपसे विद्यमान होते है, जो यह इस तमाम जातिका जोवनाधार होता है, जिस लोगोंने विविध जातियोंका इतिहास और उनकी संस्कृतिकी समालोचना करी है, वह कहते है कीः-पुराने समयमें मिश्र देश वासियों के जीवनमें कर्म-काण्डको, फारसि जीवनमें पवित्रताको, केल्डीयन के जीवनमें भौतिक विज्ञानको, (सायन्स) युनानियों के जीवनमें सौन्दर्य को और रोम निवासियोंके जीवनमें, नियम को प्रधान स्थान था इसी रीति से जिन्होंने आर्य (हिन्दु) जाति के पुरातन जीवन उपर समालोचना करी है वह कह सकते है कीः—यह जाति सदा धर्मप्रधान रही है.

(१०) (अ) यह नियम भी सर्व सामान्य है कीः-जो भाव (फिलिंग ओर झेलीमेन्ट) जातिसे प्रधान होते है, इसीसे प्रेरित होकर, वह जाति स्वयंका साहित्य, स्वतः का नित्य-नैमित्तिक



कर्म, स्वतः का दैनिक व्यवहार अनेक संस्थाओ (इन्स्टिटुशन) अथवा रिवाजो को स्वयंकी अन्दर स्थापित करते है. और उन्हीको सजीवन रखते है, यह भाव समझो की उनके जातिय जीवनका प्राण है. यह भाव गया और यह जातिका स्वरूप भी बदल गया समझो, अगर अैसा कहो के यह भावना निकलते ही, जातिका जीवन भी निकल जाता है.

जो नेताओ कितनेक रिवाजोको इनके अन्तरिय भावोंको समझे वगैर बुरा समझकर दूर करना चाहते है. इनके लिये उचित है की:–वह इस नियम को ध्यानमें रखे. प्रथम इन्होंने समझना चाहिये की इस रीवाजोकी अन्दर कोनसा भाव काम कर रहा है इनके जातिय जीवन उपर क्या प्रभाव था और अब क्या हो रहा है. अैसी शोध करे वगैर जो नेता दुसरी जातियोंकी देखा देखी प्राचिनकालसे चले आये हुवे कुछ रिवाजो को उखाडे गा तो, संभव है की यह जातिय जीवन मंदिरकी आधार शिलाको उखाड कर जातिको नाश के पथ पर डाल देगा.

और विशेष यह भी देखनेमें आया है की:–जहां तक इस रिवाजोंको वह उसी भाव के साथ सिधा (डायरेक्ट) सम्बन्ध रहता है. तहां तक यह रिवाज वह जाति के जोवनमें नये नये उद्वेग (इम्फलस)भरा करता हैं. और जब कालकी चक्रमें पडने से रिवाजे और भावो के सम्बन्धको लोक भुल जाते है. तब रिवाज निर्जिव कलेवर ही बन जाता है. उसी समय ये रिवाज के अन्तर्गत भाव को समझकर उसीको पुनर्जिवित करना चाहिए. अगर अैसे इसका सर्व था त्याग करना चाहिए. यह एक विकट समस्या है. जिसका समाधान कोई धर्म मर्मज्ञ आर्ष बुद्धि ही कर सकेगो. अन्य नही.

(१२) अब कदाच जीस किसी पुरुष के जीव्हाकी अन्दर कुछ दोष हो तो सम्भव है कि:—इसको इसीसे मिरचीका स्वाद नही आयगा, और जीस किसीके नाकमें कुछ दोष होतो. इसीको केवडेकी सुगन्धि नही आयगी, परन्तु मिरची और केवडा इसीमें



जरूर मौजूद है. इसी प्रमाण से अपनी इन्द्रिय विशेष बहिर्मुख होनेसे सच्छास्त्रका अन्तरंग गुह्यतम सुक्ष्मसे भी सुक्ष्म ऐसा ज्ञान संपादन करना मुश्किल जैसा है...फिर भी उपनिषदोंने इस ज्ञान समस्या उपर बहुत ही प्रकाशमय विदित उपाय बताये है. परन्तु शोककी बात है कीः—मनुष्य इसीका मनन-स्वाध्याय-निदिध्यासन, नही करता है.

वैदिकधर्म, सनातनधर्म, आर्यधर्म यह धर्म कोई एक व्यक्तिगत वैसे ही एक जातिगत धर्म नही है, यह एक सार्वभौम धर्म है. यह एक छोटासा (किंगडम) नही है. बल्के यह एक चक्रवर्ति राज्य (वेस्ट इम्पिरी) है. इसीमें कोई कुछ पुरुष विशेष के दृष्टिकोणको ही प्रधानत्व नही, इसीमें सभी प्रकार के दृष्टिकोणका समन्वित (समावेश) होता है. यह एक छोटीसी पाठशाला नही है. बल्के एक महान विश्वविद्यालय (युनिवर्सिटी) हैं. यह कुछ बिचार विशेषका ही संकुचित प्रवाह नही परन्तु उलट अनेक विचार प्रवाहओंका अन्तिम समावेशका अगाध, अथाग अपरिमित पारावार सागर है. 'सत्य' सत्य यह एक आत्मिक जीवनकी अनादि अनन्तधाराका प्रवाहको गंगा है. जो किः—सतत आगे आगे ही बह रही है. जीसकी शाखाये विविध प्रकार से छोटी-बडी, लम्बी-चौडी अनेक रूपमें घूम रही है. और जो गंगा अन्तमें स्वतः की सभी शाखाओंको समेट करके अनन्त, अनादि, शास्वत, ज्ञानानन्द, सागरमें समाप्त होती है.

जो आर्य-समाज वेद के यह महत्वपूर्ण विस्तारको न समझे और स्वयंकी कार्य प्रणालीको यही तंग दायरेमें बन्ध रखना चाहे और कहे कीः—जो वेद मंत्रका भाव (इन्टर प्रेक्षेसन) हम आर्य समाजी ही समझते है. अन्य नहीं. और हम जो समझते है उसी दायरेमें से बाहर जानेको हम नही इच्छते तो निःसन्देह हमको विश्वास है किः—वह आर्य समाज को, सार्वभौम धर्म बनाने की इच्छा नही रखते. वह इसको आगामी उन्नति के रस्तेमें बाधा डालते है.



हमारी हार्दिक इच्छा यही है कि:—कोई भी रितीसे आर्य समाज और सनातन धर्म आपसमें प्रेमपूर्वक मिलकर स्वतः के मतभेदोंको निर्णय करके एक हो जाये. और जब तक अैसा शुभ अवसर नही आयेगा तभी तक मतभेदोंको बड़ा (विशाल) न करते हुवे इसीको कुछ न कुछ संकुचित करते जावो.

शेवट—वह परमात्माको हमारी कर जोड़कर शि. सा. न. वि. वि. वि. पूर्वक प्रार्थना है कीः—वह उनकी ही अपार कृपासे हमारी सभी की आखोंमें से पक्षपात की बिमारीको दूर करे. और हम सभी परस्पर भावयन्तः भ्रातृभावसे प्रेमपूर्वक हमारी जीवन यात्राको पूर्ण करनेमें समर्थ बने. (वेदामृत)

६ गती–शिलता

हमारा गतीशील जीवन और उसका सनातन रहस्य

युगो युगो से मानव बुद्धि जीवन के वास्तविक रहस्यकी जानकारी प्राप्त करने के लिये प्रयत्नशील रही है. ऋषि-मुनियो और पीर पैगम्बरोने जीवनको खोजा, फल स्वरुप उन्होंने जो कुछ पाया उसीसे मानव समाजका " मार्गदर्शन " किया. कितनोने जीवन के रहस्य को समझा आत्मसाथ किया, किन्तु मानव समाज के लिये आज भी यह प्रश्न उतना ही जटील एवं रहस्यमय बना हुआ है. जीवन क्या है?

इस प्रश्नका समाधान करने के लियेः—प्रचुर साहित्य दर्शनशास्त्र आदि भरे पडे है. जिन्होंने इसका उत्तर प्राप्त किया, वे आज भी अपने अनुभव सिद्ध तथ्योंसे इसी प्रश्नका समाधान कर रहे है.

किन्तु जन साधारण के लियेः—यह प्रश्न उतना ही टेढा एवं रहस्यमय प्रतित हो रहा है.

जीवनकी एक कठीणतम ग्रन्थि है, किन्तु जीतनी कठीण है उतनी ही सरल भी हैं.

जीवनका एक और रहस्य है, वह महान रहस्य यह कि इसे जीस दृष्टिकोण से देखो, वह उसी रुपमें प्रगट हो जाती



हैं; जीसका जैसा दृष्टिकोण रहा, उसी के लीये जीवन वैसा ही दीखाई दिया.

उदाहरणार्थः – किसीने उसीको मिथ्या, नश्वर, भोगकाल समझा और कहा "ब्रह्मसत्यं, जगत मिथ्या" दार्शनिकोने देखा. जीवन प्रज्ञास्वरुप है. भक्तोने जीवन को भक्ति के अनन्त आनंद सागरमें सराबोर कर दिया. किसीने उसे बडी बडी ऋषि-मुनियोका सिद्धियोका खजाना देखा और वह खजाना ही समझे. किसीने इसे वसुंधरा पर सुख, आनंद, मौज, ऐश्वर्यभोग, शालिनता उपभोगका साधन मांग लिया, कइयोने अपनी समन्वय बुद्धिसे इसमें उसमेसे कई बातोका समन्वय भी किया. जीवन एक स्वतंत्र इकाई नहीं वरन्, विश्वकी प्राणधाराका अंग है. जिसका उद्देश है. निरन्तर की गति-शीलता सतत प्रवाह, ईस अनन्त प्रवाह गति-शील प्राणधाराका कभी क्षय नही हो पाता, इसीका स्वभाव है प्राणवान रहना, आगे बढना.

कीसी भी पदार्थ तत्व आदिकी गति-शीलता प्रवाह धाराको कायम रखने के लिये आवश्यक है किः – एक स्थान पर अपने आपको दुसरे स्थान के लिये उत्सर्ग किया जाय. साधारण शब्दोंमें अपने अस्तित्व के एक अंगको खोकर (गलाकर) दुसरे में मिलाया जाय. अपने स्थानको दुसरे के लिये छोडकर आगे बढा जाय. इसीसे प्रवाह स्थिर रह सकता है. यदि नदीमें बहने वाले प्राणिका कोई अंश अपने स्थानको छोडकर आगे नही बढे और पिछे से आनेवाले के लीये स्थान न छोडे तो गति अवरुद्ध हो जायगी. प्रवाह बंध हो जायगा. अतः प्रवाह को जारी (कायम) रखने के लिये आवश्यक है कि स्वयं सुखको दुसरे के लिये मिटाया जाय, अपने स्थानको दुसरे के लिये छोडा जाय.

तात्पर्य यह है किः—अपने आपका उत्सर्ग करने पर ही गति-शीलता कायम रह सकती है. अर्थात् गतिमय होने के लिये अपने आपको देने के लिये तैयार करना (होना) आवश्यक है. गति ही इस सृष्टिकी प्राणधाराका मूल उद्देश यही है.

सुक्ष्म दृष्टिसे देखने पर पता चलेगा किः—सृष्टिका प्रत्येक पदार्थ गतिशील और दुसरे के लिये अपने आपको



उत्सर्ग कर उसे अपना स्थान देता है. बीज अपना अस्तित्व मिटाकर वृक्ष बनता है, वृक्ष बनकर अपना सौन्दर्य फल-फूल दुसरो को उत्सर्ग करता है, अन्तमें अपनी प्राणशक्ति अनेको बीज को प्रदान कर अपने आपको मिटा देता है, प्रकृतिका ठीक यही सिद्धान्त मनुष्य जीवन पर लागु होता है. जींस जीवनमें यह परमपरा "पूर्णरुपेण" प्रतिष्ठित है ओही विश्वात्मा है अनंत परम्पराका अंग है (जो इसीं के विपरीत है जो संकिर्ण है, जो क्षण भुंगुर, जो विनाश-शील है. जो अस्तित्व रहीत है, ओही मिथ्या है.)

अब प्रश्न यह उपलिथत होता है की:—आखिर इस रहस्य को कैसे हृदयांगम् किया जाय? कैसे आत्म साथ किया जाय? जिसके दिव्य आ लोकसे सुखद एवं अमृत किरणो से जीवन अनन्त आनन्द के सागरमें लहरा उठे. और यह भी निश्चय है कि:--जब तक उक्तप्रवाह-धारा, गति-शोलताका अर्थ समजमें नही आयेगा, तब तक जीवनका सही उद्देश कभी भो प्राप्त होने वाला नही है.

यह प्रवाह इतना स्पष्ट और सरल है कि:—साधारण व्यक्ति भी उसे जान-पहिचान सकतो है. गमहिन भी देख सकता है. और संसार के सारे ग्रन्थो को पढकर भी विशाल शास्त्र-बुद्धि से यह समझमें नही आता.

ईस के लिये एक मात्र आस्था-निष्ठाकी आवश्यकता है. दृढ़ आस्था और निष्ठा भी जब पैदा होती है. जब मनुष्य में ईसीके प्रति विश्वास की गहरी जड जम जाती है. एक विश्वासके लिए : आवश्यक है कि उसका कोई न कोई आधार अवश्य मिले. उसके लिये जैसा कि—पहले व्यक्त किया जा चुका है मूक प्रकृतिसे उसका उत्तर प्राप्त किया जा चुका है, किया जा सकता है, ग्रह नक्षत्र की गति-शोलता, नदीका सतत् प्रवाह, ऋतुओंका क्रमशः बदलना, पेड-पौधोका पैदा होना फल-फूलका होना. अपनो प्राणशक्ति को दूसरे बीजोमें प्रतिष्ठापित करके अपने आपको उत्सर्ग करना, आदिसे इसकी जानकारीकी जा सकती है.



प्रकृतिकी प्रत्येक वस्तु अपने को दूसरे के लिये उत्सर्ग कर रही है. इस प्रकार उस संदेश को सुनकर विश्वकी उस गति-शील अनन्त अखंड प्राणधारा परम्पराके प्रति दृढ आस्था पैदा करनी अनिवार्य है.

आस्थावान व्यक्ति जीवनके रहस्य को अवश्य समझ जायगा और क्रियात्मक क्षेत्रमे उसको आत्मसाथ करेगा. आस्थावान व्यक्तिके समक्ष जीवन स्वतः अपने रहस्यको ठीक उसी तरह प्रगट कर देता है. अपने परदे अपने हाथसे खोल देता है जैसे कि—प्रात:काल होते ही सूर्य अपने उज्वल धवल प्रकाशसे विश्वको आलोकित कर देता है. मनुष्यभी इसी प्रकार अपनेमे स्थित अमृत भंडारसे अपनी प्यास बुझाता है.

अपने विराट स्वरूपकी अनुभूति और उस अखंड प्राण परम्परासे सम्बन्ध स्थापित करनेके लिये आवश्यक है कि—मनुष्य अपने जीवनको विश्व जीवनकी एक ईकाई अपने व्यक्तिगत व्यक्तित्वको विश्व मानवकी एक अभि छीन्न रूपमें अनुभव करे. किन्तु यह अनुभुति किसी बाह्य साधनसे प्राप्त होना असंभव है. बाह्यज्ञान उपकिरणोंकी सिमा मात्र है. सिमित वस्तुसे अनन्तकी अनुभुति नही हो सकती. उक्त अनुभुति तर्क वितर्क अथवा शास्त्रोका बोजा लाद लेने पर नही हो सकती. इसीका आधार तो खास तोरपर अनुभव ही है. जीवनका अर्थ अनुभव गम्य है. जीवन अपने व्यवहारसे अपने अनुभवसे ही अपने स्वरूपको प्राप्त होता है.

सृष्टिके उक्त रहस्यको, प्रकृतिके मूक सन्देशको ध्यानमे रखते हुए अपना दृष्टिकोण बदल दीजीए, आपका जीवन अखंड विश्वप्राण परमपरासे बंधा हुआ अनुभव कीजोये, आपके पास आज जो कुछ भी है, वह कितनी मनुष्योकी देन है? की आप एक नही, अनेकों जीवनमे भी यह सबकुछ दे सकते हैं, जो आपने अबतक प्राप्त कर लिया है. शास्त्रका आदेश है कि:—"अण्ड" ही ब्रह्मांडकी ईकाई है. फिर विश्वमेंसे लेते ही लेते रहने से काम नही चलेगा. देनेका काम जारी रखना आवश्यक है. जो जीवन आपको प्राप्त हुवा है. वह लेकर हम



लेने के लिये नहीं, वरन् उसे अनेको गुणा बढाकर देते रहनेके लिये है. दुसरे दिपोको यह ज्योति सोपने के लिये ही वह तुम्हारे पास व अखंड रूपमें जलती रहनो चाहिये. धन्य है वह जो जीवनको प्राप्त कर उसिका समर्पण दुसरोको करते हैं. अपने आपको उत्सर्ग करनेवाला ही वास्तव मे जीवनको चाहता है, मनुष्यके समक्ष जीवन अपना रहस्य स्वतः प्रगट करता है. इसिलिये पूर्ण समर्पण करना हो जोवनका वास्तविक रहस्य है. हमारे पूर्वजोने ऋषि-मुनियोने इस रहस्यको समझकर ही जोवनको "यज्ञ वै पुरुषा...की उक्ति प्रदान कि थी. इसमें कोई संदेह नही" जीवन... विश्वयज्ञकी एक विनम्र आहुति मात्र है.

चित्तकी आहुति जो करे, ब्रह्मागनी के माहो।
अग्नी होत्री ओही जानीए, और आहुति दुसरी नाही ॥

७ आज सह—चित्त की आवश्यकता :
ईश्वरने मनुष्यको वाणी दी है, भाषा नहीं

श्री सन्त प्रवरका मार्मिक उद्‌बोधन बुधवार ता. २-८-६०

श्री सन्त विनोबाजोने समस्त मराठी भाषी जनताको आवाहन किया है कि:—वे दूध की शकर बने, अपनो बातको स्पष्ट करते हुए, आपने कहा कि:—जीस प्रकार हम दूधमे शकर मिलाने पर भी उसे दुध ही कहते हैं परन्तु, असलमे उसोमें स्वाद तो शकरका हुवा करता है, ठोक उसी प्रकार आप सेवा करें, तब ही आपकी हाथोसे स्वच्छ-सुन्दर धर्मका उदया होगा. ईस अवसर पर आपने "सह चित्त" सूत्रका मार्मिक विश्लेषण किया.

श्री सन्त प्रवरने कहा की:—मातृभाषामे बोलनेका प्रसंग मुझे आज डेड १॥ वर्ष बाद आ रहा है. क्यो कि मातृ-देवता मधूर है, और जब पास-पडोसमे अन्य भाषा बोली जाती है. तब इसकी मधुरता विशेष प्रतित मालुम होती है. आपको आपकी भाषाकी संबंधमे चिन्ता है. परन्तु, मुझे इसका कोई डर नही है. ज्ञानदेवकी यह भाषा है. यह अथक है (विसे, ही



अकथ भी) है. इसके लिये व्यवस्था हो या न हो इसिका बोलबाला सुनिश्चित है. ज्ञानदेवजीने कहा है कि:—"ऐसी अक्षरे रसिके मेळविन...और इसिलिये उन्होंने अमृत की गंगा निर्माण की है. श्रीमद्भगवत-गिताका रूप सभी को सुलभ स्पष्ट हो इसि लिये ज्ञानदेवजीने संस्कृतिक वाणी को मराठीमे ज्ञानेश्वरीके रूपमें सुन्दरता पूर्वक ग्रन्थीत किया और ज्ञानेश्वरी मराठीका धर्म-ग्रन्थ बना, कि:—बहु नाही केले धर्म किर्तन, सिद्धिस नेले. स्वयं ज्ञानदेवने इसका वर्णन किया है.

मुसलमानोका धर्म-ग्रन्थ 'कुरान' है. जिसमें कहा गया है कि:—हर एक जमातके लिये अल्लाह (परमात्मा) ने दूत भेजा है, यदि ऐसाही है तो.. मैं सोचता हूँ: मराठी भाषाओंके लियेः यह दुत कौन है ? और इसका मुझे पक्का यकिन है कि यह संदेश वाहक ज्ञानेश्वर है. और ज्ञानेश्वरी ग्रन्थ. धर्म-ग्रन्थ है. "फल और त्याग" की यह भाषा कहीं भी दबाई नहीं जा सकती, न वह थक सकती. असम्भव है. आप अपने हर मकानमे इस ज्ञानेश्वरी की शाखा खोले. इस प्रदेशमें आपने सेवा की है, परन्तु उसीमे सत्ता थी.

श्री अहिल्जा देवी साहसी हुई. जिसने सत्ता और सेवा का समन्वय किया, दोनोंको एकरूप किया. परंतु आज हमारा हृदय संकुचित हो गया है.

श्री अहिल्यादेवीने उस जमानेमे विशाल हृदय के साथ देशकी सेवाकी आजहम सत्ता को छोड दे. और सेवामे लग जाय. मराठी भाषीओंके संबंधमे जनताके मुह यह उद्‌गार निकलने चाहिये कि:—"मराठी भाषिक" सेवा करना जानते हैं. उन्हें मेवा नही चाहिये, नाम नही चाहिये, चाहिये सेवा.

आप मराठी भाषिको दुधकी शकर बने, नाम दुधका ही हो. परन्तु उसका स्वाद शकरका हो, उसीकी मिठास शकरकी हो, यदि ऐसा किया, तो ही आपकी हाथो स्वच्छ सुन्दर धर्म का उदय होगा. सत्य एक ही है उसे अनेक विध नाम दिये है. वस्तु एकही है, केवल भाषाका झगडा है. मनुष्यको ईश्वरने



भाषा नही दी. वाणी दी है. आप भाषाका प्रेम रखे अभिमान नहो.

आप अच्छी हिन्दी सिखे. मराठीमे आप बोलते ही है. आप हिन्दी सिखेंगे तो दो भाषाओंका ज्ञान होगा. शक्ति बढेगी. विशेषः-आपने शकर सा बनना चाहिये. प. पू. श्री विनोबाजीने आगे कहाँकि-आप सभोको "सह-चित्त, होना चाहियें. यह सही है को "पिन्डे पिन्डे मतैर्भिन्न" परन्तु फिरभी यही हमारा "सह-चित्त" बना तो ही हमारे प्यारे भारतका पार लगेगा, दुनिया बनी रहेगी. सह जीवन का सह आस्तित्वका जो प्रयास आज दुनियामे चल रहा है. वह योग्य दिशाकी ओर पहलु है. आज रूस और अमेरिका यही भाषा बोलने लगे हैं. बालक जब बोलने लगता हैं, तब आशा को जाती है कीः वह उसके अनुसार आगे चलेगा भी, और इसि लिये मैं इसे बहुत अच्छा प्रारंभ समजता हूँ. अब इसमें वृद्धि होने की आवश्यकता है. हमने अपने देशमे पुराने जमाने "सह अस्तित्व" का प्रयोग किया. इसि लिये जातियोंका निर्माण हुवा परन्तु आज की हमारी आवश्यकता सह-चित्त की है. यह कोई नयी मांग नही है दश (१०) हजार वर्ष पूर्व वेदोमे यह मांग की गई है.

श्री. पू. प्रवरजीने कहा किः-आज हमे दो बातों की नितान्त आवश्यकता है, पहली बात यह किः—तत्वतः हम सब एक हैं. इस भावनाका हमारेमे निष्ठा पूर्वक प्रादुर्भाव होना चाहिये. हमने मूलतः इस बातको अपने आपमे पूर्णतः समालेना चाहिये. इसे मै 'अद्वैतवाद" कहता हूँ. और दुसरी बात हमारा कोई समान कार्यक्रम होना चाहिये. एक अैसा कार्यक्रम किः-जिसके प्रति किसिका भी मतभेद न हो. वह (यह) अैसा कार्यक्रम हमारे आचरण के लियेः-बनान चाहिये किः-जिसके अनुसार हम काम मे लग जाय यही मेरा प्रयास है.

पू. श्री प्रवरजीने धर्मकी परिभाषा करते हुये कहा किः जो धर्म होता हैं, वह सबका होना चाहिये किसी अेकका वह धर्म नही है. परन्तु ख्याल रखने योग्य सुझावः "तस्माच्छास्त्र प्रमाणं" कृष्णं वन्दे जगद्गुरु, वचनानुसार, हो फक्त.



८ पू. श्री. प्रवर सन्त विनोबाजीका ज्ञानयोग

पू. श्री प्रवर सन्त विनोबाजोने ज्ञान योगकी साधना करी है. वह केवल बुद्धिको कसोटी पर चढाने के लिये नहो, परन्तु धर्मको जीवनमें उतारने पुरती ही. ज्ञान साधना उन्होंने करी है. दाखला तरीकेः—सन्त विनोबाजी २१ इकिस भाषाको समजते हैं. फिर भो मै इतनी सारी भाषाए सिखा हूं, ऐसा सिका मारने के लिये, इतनी सारी भाषाए वह नहो सिखे. परन्तु दुनिया के सभी धर्म के मूलग्रन्थ पढने के लिये वह संस्कृत, पाली, अर्धमागधी अरबी, फारसी, लेटीन वगैरे भाषाए सिखे हैं. वैसी ही भारत के सभी सन्तोकी वाणीका प्रसाद उनकी मूल भाषामें (हृदय वाणो विनय-विस्तार) ज्ञानरुपी रस चाखने के लिये वह भारतकी सभी भाषाए सिखे है.

दक्षिण-भारतकी—तामिल, तेलुंगु, मलयालम और कन्नड भाषा लिपिया वह वर्ण-माला नवशाकी उपर से सिखे नही. परन्तु जीस जीस लिपिमें छपी हुई गिताजीकी नकलो (उतारे) परसे अन्योन्य लिपियोका उन्होंने अभ्यास किया है इसमें सर्व प्रथम "धर्मक्षेत्रे, कुरुक्षेत्रे" किस प्रकार से लिखा होगा? इसी ऐसे प्रथम श्लोक से एक एक वर्ण (अक्षरों को पहिचान कर करके अन्योन्य लिपियोंका ज्ञान मिलाया है.

भिक्षु अखंडानंदकी प्रसादीमेंसे:—प्रमुख मनु सुमेदारः—

सन्त कबिर (अध्यात्मिक पदो) के नामसे प्रगट साहित्यकी एव मुस्लीम महात्माये नाम की अतिरयुम, मुस्लीम सन्तो के चरित्रोपदेश के पुस्तकमें से भिक्षु अखंडानंदजो के मार्फत मानव के लिये मानवता रुप अनेक शुभ सन्देश याने मानवोंके लिये महा प्रसादः—

निवेदनः—पंधरावी और सोलावी इसवी शताब्दी के सुमारे हिन्दु और मुसलमान कोममें एक दुसरे के लिये आदर हो. एक दुसरेका धर्म मजहब और सिद्धान्त के लिये मान पैदा हो, और अलग अलग नामसे एक ही ईश्वरको भजनेवाले मनुष्यो सदाचारमें और ईश्वर भक्तिमें जोवन पूरा करे. ऐसे यह प्रयास



कबिर और दादु ई. के हाथोसे हुये. वैसे ही अकबर
राशिकोद के नाम भी यही दिशामें कहना चाहिये. उसके
यत्न मजबुति से किसीने भी नही. किया. यह अफसोस
ा है.

न्दु समाज बहुतही संकुचित हो गया. न्यात-जात बढ
र भी ऐसे रुढियोंका जोर बढते ही गया. शुद्रो तरफ
न्तु मुसलमानो के तरफ भी अभड-छेटको भावना
बल हो गयी. हम और तुम ऐसा मुसलमानो के साथ
अलगपणा बहुत ही बढ गया. वह आज हिन्दुस्थान
) की उन्नति के मार्गमें अउद्यनिय पहाडकी माफक
।

न्दु और मुसलमानो को अभी भी बहुत दुर्बल एवं हिन-
ाने के लिये उन (दोनो) की बीचमें एक या दुसरी
वैर-जहर के कीडे अज्ञानीयों फैला रहे है. ऐसे समयमें
लीम महात्माओके नामकी पुस्तक बाहर पाडनेका मुख्य
ो है कि:-हिन्दुओमें मुस्लीम धर्मकी विषयमें जो
मज है वह कमी हो जाय. और मुस्लीम भाईयोंका ध्यान
धर्म-सिद्धान्तो के उत्तम आदर्श तरफ जादा खैंचाय.
ो कोमो के लक्ष (ख्याल) में यह बात उतरती चले
नेया के सभी मुख्य धर्म परमात्मारुपी एक ही वृक्षमें
रक ही उद्देश से निर्माण हुये है. और वह अनेक डहाले
ांदिया) जैसे है. अगर चाहे उतने मतभेद होते हुये
ध्येय, हेतु और साधन-साधना एक जेसी ही है.

ा भारत वर्षमें स्वराजकी भावना चौमेर जम रही है
ाज मिलनेमें एक बडेमें बडे साधन है. हिन्दु-मुसलमान
यह गिनतीमें तो गिना गया है, यह ऐक्य लानेमें
ा साधन है. अरस-परस सम्पूर्ण पहिचान.

आचार-विचार, पवित्रता, गहनता ई. सभी हिन्दु
ओही पवित्रता, गहनता ई. मुस्लीम धर्ममें भी है. यह
खत समजमें आ जाय तो बहुत सारी गैर समजुति



दूर होगी. यह गैर समजुत ऐसे बिचार पुस्तकों द्वारा बहुत धीमे से और सहज गतिसे दुर हो सकती है.

जीस तरह गुजराती वाचक मिराबाई, नरसिंह महेता, सूरदास कबिर वगैरे भक्तो के चरित्र पढते है, और उसीमें से बोध ग्रहण करते है। उसी प्रमाण से यह इस्लामी भक्त गणो के चरित्र उपर से बोध लिया जाय ऐसे हैं.

हिन्दु धर्म के महापुरुषो के पडखे कन्धे-कन्धा, उतने ही उन्नत स्थान पर ईस्लाम के तपस्वियो भी बेठ सके, ऐसे है. और ईस्लामके सच्चे आत्माका दर्शन भी यह पवित्र पुरुषोके जीवन चरित्रमें ही हो सकता है. वैसेही उसी प्रकारका साहित्य बहुत ही उपयोगी होगा. ईसमें संशय नही. और यह ऐसे ऐक्य साधने के हेतुसे ही ईस समय मुस्लीम महात्माओका पुस्तक तैयार करनेमें आया है.

हिन्दु-हिन्दुमें, मुस्लीम-मुस्लीममें, जैन-जैनमें मतभेद और झगडे है, इस जात के झगडे कमी करनेकी हर एक मानव की "फरज" है और सच्ची मानवता यही है.

विशेष-सूचना:—

सभी मुसलमान बुरे नही, वैसे ही सभी हिन्दु देव नही.

—गांधी दिल्ली-डायरी

१० एकेश्वर वाद

० मुजे दावा है कीः—अगर हमने ठीक ठीक हिन्दु-धर्मको समजा होता हिन्दु-धर्मका पालन किया होता, तो यह मुल्क एक सेकन्ड के लीये भी गैरोका गुलाम नहीं हो सकता था. अगर हमने हिन्दु-धर्मका पालन किया होता तो हिन्दु और मुसलमानो के अन्दर वैमनस्य न दिखाई पडता.

१ धर्म तो एक दुसरे की सेवाकी चीज है. धर्म फाडने वाली चीज नहीं है. वह एक दुसरो को मिलाती है.

२ ऋग्वेद हिन्दुओंकी सबसे पुरानी किताब है. ऋग्वेदका जब समय था तो उस आदि कालमें आप देखेंगे किः—हिन्दु जातिका यह नाम भी नहीं था. हिन्दु नामको शुरु हुवे अभी



तीन हजार वर्ष भी नही हुये. इस जाति (हिन्दु) का नाम उस समय आर्य था. आर्यलोग उन दिनो ईन्द्र, वरुण, मित्र, सूर्य, चन्द्र आदि देवताओंके उपासक थे. उसके बाद यह धर्म आगे बढा, उसने उन्नति की वह अपने विकाश को प्राप्त हुवा तो उसने इन अनेकोमें एक परमात्माको देखने की कोशीस की मै अपने को "मवहिद" यानी एक ईश्वरका उपासक गिनता हूं, परन्तु एक ईश्वरको मानते हुये भी, उसके अलग अलग गुणो अगर पहलूओंकी अलग अलग रुपोमें उपासना को में गलत नही कह सकता.

४ कोई भी ईन्सान उस परमपिता परमात्माको उसके असलीरुपमें नही देख सकता. यह एक मोटीसी चीज है कि:— जब कभी कोई मनुष्य ईश्वरकी कल्पना करने को कोशीस करता है. उस परवर्दिगाका ध्यान अपने मनमें लानेको कोशिस करता है. तो वह उसके किसी न किसी खास पहलु या गुण को कल्पना कर सकता है. शुरु को अनेक देवताओंकी पुजाका यही असली रुप था. और यही उसका मतलब था. मै एक छोटासा किस्सा इस बारेमें बयान करुंगा.

आपमें से कुछने मौलाना रूमका नाम सुना होगा. वह एक महशूर फकीर और सूफी सन्त थे। उनकी मस्नवीमें एक किस्सा आता है कि:—हजरत मुसा एक पहाड उपर चले जा रहे थे. उन्होंने देखा कि—उस पहाडकी ढाल उपर एक गडरियां पडा हुवा कुछ बक रहा है. गडरिया लेटा हुवा था. उसकी मेडे नीचे खड्डेमें चर रही थी. उसका दंडा दाहिने तरफ पड़ा हुवा था. कम्बल एक तरफ रखा हुवा था, और वह गडरियां कुछ बक रहा था ईरानी जबानमें खुदा (परमात्मा) को यजदान कहते हैं. गडरिया कह रहा था कि—

पे मजदान! अगर तू. मुजे कही मिल जाय तो तेरे पांव थक गये होंगे तो मै अपनी हाथो से तेरी मुट्ठी (चप्पी) कर दुंगा. तेरी चप्पल फट गई होगी तो मै अपनी हाथोसे तेरी चप्पल सी दुंगा. पे यजदान! तु भुखा होगा, तो मै जंगलसे लाकर तुझे ताजा शहदका प्याला पिलाऊँगा.



ऐ यजदान ! तूं कहाँ है ? तूं मुझे क्यों नहि मिलता ? अगर तू मुझे मिल जाय तो मै तेरे बिछोने को अच्छी तरह बिछाऊँगा. एक भी सलवट नही रहने दुंगा, अगर तु मुझे मिल जाय तो तेरी कम्बलमें जुये पड़ गये होगे. तो उन्हें मै एक एक करके बीन दूंगा.

ऐ यजदान ! अगर तू मुजे कही मिल जाय तो. तेरे बिस्तर पर मै रातको फुल बिछा दुंगा. फिर तुझे मिठी मिठी निन्द आयगी.

ऐ यजदान ! तू मुझे क्यों नही मिलता ? गडरीयां ईस तरह बक रहा था. उसकी आँखोंसे लगातार आँसूओंकी धारा वह रही थी.

हजरत मुसाने जब यह. गुफत गुं सुनी. तो उन्हें गुस्सा आया, उन्होंने सामने आकर उस गडरियाको देखा, दोनो निगाहे चार हुयी हजरत मुसाने कहा:—ऐ चौपान ! तू क्या कह रहा है ? उसने फिर ओही बाते दूहरा दी, और कहा कि:—मै यजदान से बाते कह (कर) रहा था.

हजरत मुसा बोले ! तू यजदानकी शानमें यह सब कुफ्र बक रहा था. तुने जो कुछ कुफ्र बका है. उसकी आग बन जाय तो, तू तो उस आगमें जल ही जायगा, लेकीन दोनो जहान भी उसमें जल जायेगा ।

गडरियाने घबराकर पुछा ! मूसा, मुझ से ईतना बडा कसूर हो गया है ? मेरे गुन्हाहका कोई हल, कोई कफपारा या प्रायश्चित नही है ?

मुसाने जवाब दिया:—नही तूं उस अल्लाहकी शानमें कह रहा था कि:--जुये पड गये होंगे, चप्पल फट गयी होगी, तो क्या अल्लाह के जुये पड़ सकतां है ? क्या उसे तेरी शहदकी जरुरत है ! तूने बहुत बड़ा गुन्हाह किया है. तूंने उस "वहद-हुला शरीक" की शानमें इतनां गन्दो बाते कही है कि:--इसीका कोई प्रायश्चित नही.

गड़रिया बोला मुसा : फिर सोच ले, क्या मेरे गुन्हाहका कोई प्रायश्चित नही है ! जब हजरत मुसाको तरफसे उसे कोई



तल्ली देनेवाला नही मिला. तो उसने अपनी लाठी ली,
न्धे पर डाला और अपनी भेडो को वही छोड़ चल
ता खडे देख रहे थे. चौपान सामने की पहाडी पर
चढा, जब वह पहाड़ीकी दुसरी तरफ जाकर, मुसाह
से गुम हो गया, तब मुसा लौटे, उसी समय "आका-
गैबो आवाज.. हुयी. अल्लाहने मुसाकी दिलमें आवाज
को "ईलहाम" हुवा...

ाहने मुसा से कहां कि:--हे मुसा तूने यह क्या
साने पुछा ! या अल्लाह ! क्या मैने कोई कसूर किया ?
ाहने जवाब दिया मुसा क्या यह तुजे मालुम नही ?
असलीयत तेरी दिमागी कल्पना से भी उतनी ही
नी उस मोटी अकलवालेकी मोठी कल्पनासे. मुसा !
हुचनेका रास्ता दिमाग नही है. हम तक पहुचनेका
ठ है, और वह गहरीयां, उस दिल के दरवाजे पर
या, तू अभी उससे दुर है. तूने उससे सबक लेना
. तूने उलट उसको उपदेश देना चाहा. अल्लाहने
ा.

हबे इश्क अज हमां मिल्लत जुदास्त"
शा कारा मजहबो भिल्लत खुदास्त"
नया ! आदाबदाना दीगरन्द"
शका सो जे दरूना दीगरन्द"
ब रहां वस्ल करदन आमदी"
राए फस्ल करदन आमदी"

मुसा इश्कका मजहब सब मजहबो से अलग है. वह
जहब और खुदा ही मिल्लत है.

वो ! हे मेरे धर्मावलम्बी बन्धू और भगिनीयो:-उपर
ह दुसरी चीज है जीनके दिलमें आग लगी है. वह
होते है. और जाहेरी कर्मकान्ड माननेवाले दुसरे
है. ईश्कका मजहब, प्रेमका:—मजहब, अल्लाहकी चीज
जे मिलाने के लिये भेजा था. अलाहदा करने के



लिये नही भेजा था. तूने हमारे भक्त को "हक" से अलाहदा कर दिया। वगैरे.

मुसाने पुछा ! अल्लाह अब मै क्या करू? अल्लाहने कहा कि:—हे मुसा उसी चौपान के पास जा और उससे कह कि:- उसके लिये सब कुछ माफ है, फिर मुसा चले उस गडरीया को ढूंढने ने के वास्ते. मुसाको तीन बरस उस चौपान को ढूंढनेमें लग गये, आखिर वह एक पहाड़ पर मिला मुसा, उसके पास पहुंचे. गड़रीयांकी आँखे आसमानकी तरफ लगी हुयी थी. वह अकेला जंगलमें खड़ा था, गड़रीयाने पूछा, मुसा अब कैसे आये ? मुसाने जवाब दिया कि:—मै तुझे यह खुश खबरी देने के लीये आया है कि अल्लाह कहता है कि:—तूं ठीक था, और मै गलत था. तेरे लिये सब कुछ माफ है, चौपानने जवाब दिया ! मुसा तुम किससे बात कर रहे हो ? उस वक्तसे आज तक मै सेकडो बरसका रास्ता तै कर चूका हूं...

मैने उस पुराने गड़रीया के दिलको पिसकर, उसके खुनमें स्नान कर रखा है, मेरी खुदी अब मिट चुकी है.

यह कहानी मैने आपको सामने ईस लिये रख्खी कि:— हम ईश्वरको अलाहदा. अलाहदा. कई तौरसे मानते है, और पूजते है. उसकी अंश-पूजा अलग अलग देवताकी रुपमें पूजाको मै जरुर तौर पर "तौ हिद" याने "एकेश्वरवाद" के खिलाफ नही समजता.

यस्य सर्वे समारंभा, काम संकल्प वर्जितः
ज्ञानाग्नि दग्ध कर्माणं, तमाहुः पंडित बुधाः

जीसके सभी उद्योग वासना और संकल्प याने मै करता हुं, ऐसे अभिमान रहित और जिनके कर्म ज्ञानरुपी अग्निसे भस्म हो गये ऐसे पुरुषको लोक बुद्धिमान पंडित कहते है. (गि. ४-७९)



११

(१) सायणा चार्य के भाष्य का पठण

स्थानः–कलकत्ता. ई. स. १८९७

आज दस दिन हो गये. स्वामिजी के पास शिष्य ऋग्वेद का सायण-भाष्य पढता है. स्वामिजी बाग बजार मे स्व. बलराम वसु के घरको ही रहते थे. मेक्ष मुल्लर ने अनेक संख्याओंमें संपादित किया हुवा, " ऋग्वेद " एक अच्छे भले सद्‌गृहस्थके घरसे आश्रम मे मंगवाया था. एक तो नूतन ग्रन्थ और फिर वैदिक भाषा इससे (स्वामिजी शिष्यको अरे बंगाली) पढते पढते शिष्यको अनेक गुचवण (अडथडा) आने लगा. इसि से स्वामिजी शिष्यको "अरे बंगाली !" ऐसे कहकर अनेक वखत स्नेह मश्करी करते थे। और कठिणता पूर्वक शब्दो का उच्चार और अर्थ कहकर समझाते थे. वेदका अनादित्व" सिद्ध करनेके लिये सायणने जो अद्‌भुत युक्ति कौशल्य दर्शाया है...उसोकी व्याख्या करते समय स्वामीजी भाष्य कारककी कितनी एक समय बहुत तारीफ किया करते थे. तो कोई समय किसी प्रमाण सम्बन्धि स्वयंका मतभेद है, ऐसा समझा-कर सायण प्रति कटाक्ष भी करते थे.

(२) मेक्ष मुल्लर यह सायणचार्य का ही अवतार है !

एक समय इसि प्रमाणे वेद–पाठ चलता था. तब स्वामीजी ने मेक्ष मुल्लर सबन्धि बात–चितका प्रारंभ करते हुये सम-झाया है कि तु माने गा ? मेरे को तो ऐसा लगता है कि:– सायणाचार्य स्वयंहो (स्वतः)का भाष्यका उद्धार करने के लिये मेक्ष मुल्लर रूपमे फिरसे जन्म–धारण किया है, बहुत ही दिनोसे मेरी यही धारणा थी, उसीमे भी जब मेक्ष मुल्लरका दर्शन किया तो तभीसे यह धारणा विशेष दृढ हो गयी है.

मेक्षमुलर जैसा खंतिला–उत्साही और वेद–वेदान्तमें पारां-गत पंडित इस देशमे भाग्यसे ही कोई होगा. ईसके बाद भी पू. श्री. गुरुदेव रामकृष्ण परमहंस जी प्रति भी कैसा अगाध



भक्ति ! श्री गुरुदेवको ईश्वरावतार रूपसेही मेक्षमुलर मानता था. मैं जब उनके वहाँ अतिथि रूपसे गया तब भी उन्होंने मेरा कितना सत्कार किया !

यह वृद्ध स्त्री-पुरुषको देखते ही असाही प्रतित हुवा कि: समझो वसिष्ठ और अरुन्धतिके समान वह उभयता संसार चलाये जा रहे हैं. मैं जब उनके पाससे विदाय हुवा; तब यह वृद्ध स्त्री-पुरुषकी चक्षुओंमें आँसु भर कर आये थे !

(३) सायणाचार्य म्लेच्छ प्रदेश मे क्यों जन्मे ?

शिष्य ने प्रश्न किया कि: हे पू. महाशय. अगर सायण स्वयं ही मेक्ष मुलर होवे तो इस पूण्य भूमि देश भारत में जन्म न लेते हुए, वह म्लेच्छ रुपसे म्लेच्छ देशमे किस लिये जन्म धारण करे ?

पू. श्री. स्वामीजीने शिष्य के प्रश्न प्रति जवाब देते हुये कहा कि:—"अज्ञानता को लेकर ही" मैं आर्य और वह म्लेच्छ असे विभाग पड़े हैं। परन्तु, जो स्वयं स्वतः वेदका भाष्यकार है, और जो ज्ञानकी ज्वलंत मूर्ति है. उनके लियेः तो वर्णाश्रम जैसे—जाति विभाग कैसे हो सकते हैं ? पर उपकार के खातिर वह गमे वहाँ जन्म ले सकते हैं. खास कर के जीस देश में विद्या और धन ईन उभयता का वल है. तहां जो जन्म असे व्यक्ति न ले तो असे यह महान ग्रन्थोंका छपाने का खर्च कहा से मिले ?

सुना है कि ईस्ट इन्डिया कंपनीने यह ऋग्वेद छपाने के लिये नउ लाख रुपिया रोकडा निकाल कर दिया है। इतने से भी यह काम पूरा हो असा नही था, इस देश के सेंकडो वैदिक पंडितों को मासिक पगार देकर इस कार्यमें उन्हो (मेक्ष-मुलर) ने संघठित किया था।

विद्या और ज्ञान के लिये, असा गंजावर खर्च और असी प्रबल ज्ञान तृष्णा इस देश (भारत) में इस समय में भी असा कहीं देखा है !

मेक्ष मुलर ने स्वयं ही ग्रन्थकी भुमिकामे लिखा है कि:—



उन्होको पच्चीस वर्ष तो केवल हस्त लेखीत प्रतो तैयार करने को लगे थे. और बीस वर्ष तो ग्रन्थ छपाने को लगे हैं (थे) ऐसे एकन्दर ४५ पंचे चालीस वर्षतक एक ग्रन्थ के पिछे. ऐसे इसी तरह से लगे रहना यह क्या सामान्य पुरुषका कार्य है ? अब विचार करके देख किः—सायण स्वयं नही होवे तो ऐसा बनेगा ? सही सच्ची बात है ना ?

(४) वेद अनादि किस रीतिसे ?

मेक्ष मुल्लर, सम्बन्धि ऐसी बात चीत होने के बादः— ग्रन्थ पाठ आगे चला। वेद के आधारसे ही. इस सृष्टिका विकास हुवा है. ऐसे सायण के मतको आगे रखकर, उनको टेका (आधार) देते हुये स्वामीजी बोलने लगे किः—

वेद, याने अनादि 'सत्य' की समष्टि = समस्तता, वेद पारां· गत ऋषियोंने इस सभी 'सत्य' को प्रत्यक्ष किया, अति प्रिय दर्शि सिवाय अपने जैसे साधारण मनुष्यो की दृष्टि से वह प्रत्यक्ष हो सकेगा नही, इतने के लिये हीः—वेद. मे ऋषि...शब्द का अर्थ : मंन्त्रार्थ दृष्टा...ऐसा करनेमें आया है.

एक मात्र जनोई (यज्ञ-पवित्र) धारण करने से ही वह ब्राह्मण बन गये ऐसा नही था. ब्राह्मणादि जाति-विभागो तो बादमें (पिछेसे) हुई है.

वेद 'शब्दात्मक' अर्थातः—भावात्मक अथवा अनन्त भावो की समष्टि मात्र है. 'शब्द' पदका वैदिक प्राचिन अर्थ है सूक्ष्म भाव. ऐसा होता है. यह सूक्ष्मभाव, पिछेसे स्थूल रूप लेकर स्वतः को स्पष्ट करता है।

मतलब यह है किः—जब प्रलय होता है, तब भावी सृष्टि के सूक्ष्म बीज वेदमें ही ढके हुए रहते हैं। इतने के लिये ही —अपन अपने पुराणोमें देखते हैं किः— मत्स्यावतार समय मे ही वेदका उद्धार होता है.

सारांश :—यह है कि पहले प्रथम अवतार (मत्स्य रूप) मे ही वेदका उद्धार हुवा। उसके बादः—वो ही वेदमें से धीमे धीमे सृष्टि का विकास होने लगा अर्थातः वेद से रहे हुवे



'शब्द' के अवलम्बन से विश्वके सभी स्थूल पदार्थका सूक्ष्मरूप 'शब्द' अथवा 'भाव' ही होता हैं पूर्व पूर्व के कल्पमे इसि प्रकार से सृष्टि की उत्पत्ति हुई थी. यह बात तो वैदिक सन्ध्या मंत्र मे भी स्पष्ट है.

सूर्या चन्द्र म. सौ धाता यथा पूर्वम् कल्पयत् ।
दिवंचू पृथिवी चान्तरिक्ष मथो स्वाहः

१२ सव धर्मान्परित्याज्यंः मामेकं शरणंव्रजाः

मैं ?.....कौन हूँ ? पिछानते नही ? मुझे जानो और पैछानो.

मैं लडको का लडक, पणाका खिलौना हूँ, मैं मिठाई हूँ, मैं जवानो की जवानी हूँ, मस्ती हूँ, मैं बुढोंकी बुढौति की लकडी हूँ-सहारा हूँ ।

मनुष्य, मेरा गुलाम है, मैं उसे हजारो वार नाच नचा सकता हुं, नचा चुका हुं, नचा रहा हूं ! दुनिया मुजसे दवती है, मै उसे उलट सकता हूं, उलट चुका हूं. उलट रहा हूं ! प्रकृति मेरी वश-वर्तिनी है. मै उसे बनाता हूं. बिगाडता हूं तोडता हूं. मरोडता हूं !

विशाल विश्वमे अगर कोई ईश्वर हो तो, मै हूं । धर्म हो तो मै हूं । प्रेम हो तो मै हूं । मै सत्य हूं । मै शिव हूं । मै सुन्दर हूं । मै सत हूं । मै चित्त हूं । मै आनन्द हूं । आलोक मै हूं । परलोक मै हूं । हर्ष मै हूं । शोक म हूं । क्षमता मै हूं । ममता मैं हूं ।

मेरी झण झणाहट मे जो अलौलिक मघूरीमां है. वह विणा-पाणी (बह्न-बेटी) सरस्वतिकी विणा मे कहां ? डमरु वालोके डमरुमें कहाँ ? मृदंग की मुरचंग मे कहां ? सितार जल तरंगमे कहां ? लक्ष्म पति के पांच जन्यमे कहां ? कोकिलकी कल काकली मे कहा ? कामिनी के कोमल कंठमे कहां ?

यहां कहां ? वहां कहा ? मे सप्त-स्वरो से उपर अष्टम स्वर हूं, परम मधूर हूं !

गिता के गाय को, चण्डी सप्त षतीके पाठको. भागवत भक्तो, सत्य नारायण के कथा के प्रेमियो, रामायण के अनुरागियो, महाभारत के मानने वालो, मेरा गीत गावो, मेरा पाठ

https://archive.org/details/UndatedAagamBhavishyaVaaniHindiFull130D/page/n61/mode/1up



पढो। मेरे भक्त बनो। मेरी कथा सुनो। मुझसे अनुराग करो। मुझे मानो। मेरी शरण आवो। तारन-तरन मै हूं। भव-भय हरण मैं हूं। शरणा शरण मै हूं। जन दुःख हरण मै हूं। धवल वर्ण मै हूं। मंगल करण मै हूं। पुण्य-चरण मै हूं!

लंका सिताकी रुष्टि-तृष्टि से नही, मेरी रुष्टि-तृष्टि से जली थी. मै बिभिषण उपर प्रसन्न था। कौरव द्रोपदी के कोपसे नही मेरी कोपसे नष्ट हुए थे! मै पान्डवों पर प्रसन्न था। जर्मनो-ब्रिटेन या अमेरिकाकी धूर्ततासे नही मेरी धूर्ततासे पराजित हुवा. मै ब्रिटेन अमेरीका पर प्रसन्न हूं!

ठाकूर जी (मंदिर मुर्ति, भगवानजी) बोलते नही, मै बोलता हूं। मै उनसे बडा हूं! ठाकुर जी चलते नही मै चलता हूं। उनसे मेरी अधिक साक्षी-पुरावा है! देवताओमें वह आकर्षण नही जो मुजमे है! यह युग तर्कका है. उदाहरणका है, प्रत्यक्षवाद का है स्वयं प्रभुताका है! मै प्रत्यक्ष हूं। सद्यः फलकादानी हूं। स्वयं प्रभु हूं। आकर्षक हूं। ईश्वर हूं। ईश्वरसे बडा हूं!

मुझसे वरदान लेकर पाप करो, फिर भी तुम देवताओसे पूजे जावोगे! मुझसे वरदान लेकर एक-दो नही सात खुन करो, साफ साफ बच जावोगे! निर्दोष छुट जावोगे! साम्राज्य को रामराज्य से भीडी दो. मनुष्यकी बढी हुयी खेतीको बेरहमि से कटवा डालो. जलवा डालो. स्त्रीयोकी मर्यादाको मेरी तरफसे चाहे उतनी सेरकी हिसाब से, दिनमे चाहे उतनी बार खरीदी करो और बेच डालो, संसार के विधवाओ, बच्चो, बुढो और अपाहिजो की हाय से भर दो। भूकंप उठादो। प्रलय कर दो, चाहे सो करदो। मगर मुजसे वरदान लेकर मै सर्व शक्तिमान हूं! कहो मै कोन हूं? नही जानते? नही समजते? नही पहचानते? थोभो जरा विचार करो और सोचो कि इतनी सारी बाते आपके सामने मैने कही सुनायी. तो आखिर मै कोन हूं? कौन होगा? और थोडीसी सुनो ध्यान दो:

सर्व धर्मान्परि त्याज्यं-मामेकंशरणं व्रजा।
अर्थात-सभी धर्मको छोडकर मेरी शरण आजा॥



मित्रो—स्वर्ग-नर्क को पहुचानेवाला अेक मात्र मै हू।
पैसा पैसा हाय पैसा! जैसी मति वैसी गति.

१३ बातको सोचो और समझो।

धन के बिना श्रीमान, कैसे बनना?

यह कह दो उनसे, जो पैसे पे जान देते हैं,
हर एक रोग की पैसा, दवा नही होताः-

धनको प्राप्ति ही यही कुछ सभी सुखो की प्राप्ति नही है. पैसे के बिना भी जीवन बिता जा सकता है. जीवन और मरण मे से जीन्दा रहनेकी तरकीब मालुमत हो जाय तो शानदार जीवन निभा जा सकता है.

डॉ. इमर्सन, कहते हैं किः—किसी के पास बहुत साधन होवे तो, इसिसे उसको बडाई मारने देना चाहिये नही. और बता देना चाहिये किः—मै पैसे के बिना चला सकता हूं।

कोई भी मेरे को पैसा सुख और मान-पान देकर खरीद सकेगा नही.

लोकोडेर कहते हैं किः-कोई भी वस्तुने मेरे हृदयको सबसे अधिक (विशेष) असर किया हो, तो वह यह किः- छोटेसे मनुष्य के बडे अन्तःकरण ने करी है.

गोल्डन स्मिथका मत यह है कि:—जीस देशमें लक्ष्मि देविका संग्रह बढने से मनुष्य वैभवि-पतित होता है। और इसिसे उसी देशका अनिष्ट (हानि) जल्दी होती है.

आराम नही, प्रयत्न और व्यवस्था भी नहि परन्तु मुश्किलता ही उत्तमोत्तम मनुष्य (मानव और मानवता) की बडाई करती है. खुदापाक (पवित्र परमेश्वर) जब एक मनुष्यको शिक्षण देना चाहता है, तब वह उसीको सर्व सम्पन्न साधन वाले स्कूल (पाठशाला) मे नहि, परन्तु, जहाँ सभी प्रकारकी तंगी हो अैसी पाठशालामे भेजता है.



श्री. सन्त ज्ञानेश्वर, तुकाराम महाराज, नामदेव, जनाबाई मिरांबाई सन्त सबु बौद्ध गौतम, खिस्त ईशु, रामतिर्थ, कोन फयुशियस, नानक; कबिर; नरसिंह महेता, सुदामाजी; बुकर गेरिसन, इमर्सन, पडोसन, सेकसपियर वगैरे इ. यह सभी ऐसे ऐसे विरल आत्माए, पैसे के बिनाही श्रीमंत थे. वह पुष्प और पक्षियोंमें, सौन्दर्यमय घांस मे, प्रभु लिलाका झरना देखा करते थे। पाषाणमे उपदेशका और प्रत्येक वस्तुमे कल्याणका दर्शन किया करते थे, वह कहते थे, कि:—मनुष्यको अरण्य के सृष्टि सौन्दर्यको मजा लुटने के वास्ते कोई भी प्रकारका कर वसुल देना नही पडता।

उन (मनुष्य) को जगतका प्रत्येक पदार्थ सौन्दर्यमय महान सृष्टीकी पाससे खास सन्देश गुह्य-गुप्त रीति से मालुम होता था, और वैसे ही प्रत्येक पदार्थमें उसी एक परम परमेश्वर शक्ति और सुन्दरता उनकी नजरमें दिखाई दिया करती थी. मालुम होती थी.

जीस आतुरता से जंगलका तिसा (तरस्यो) प्रवासि वृक्षघट (घनघोर छाया) में झरनेका ठंडा जल. पीता है. उसी आतुरतासे उनके अन्तःकरणको बीड (जंगल) खेती, पुष्प, पंखी, नदी, नाला, झाड, पहाड़, पर्वत और हरएक जगेह जंगल-जंगल, वन-वनसे, उसो एक नेक नाम परम परमात्मा अल्लाह, गोड़, इत्यादि विशेष नाम शक्तिकी और प्रेरणा खेंच ली थी. और इसि-रितिसे उन्होंने तत्त्वामृतका पान किया था.

ऐसी रीतीसे प्राणो और पदार्थ मे रही हुई उस गुप्त सारभूत शक्ति और संपत्ति से जैसा अपन दुधमेसे मखन निकालते हैं, उसी माफक उन्होने सारभुत शक्ति निकाल ली थी। निकाला करते थे और निकालना चाहिये.

और ऐसे इसि बाबतों के जोः—तत्वामृत के प्यासे और आतूर (आशक अल्लाह के नाम के जो) हैं, उन्ही आत्माओंके उपर तैसी वृष्टि करना उनका कार्य था। वह मानते थे और समझते थे. सोचते थे कि:—मनुष्यको सबसे अधिक महत्वकी



खुराक मुखद्वारा मिलती नही, परन्तु, मनद्वारा मिलती है। कारण किः—मनुष्य जो मात्र अन्न और पैसे से ही जीवित रह सकता होवे तोः—

वह केवल पशुओंकी स्थितिमें ही स्थित है। ऐसा समझनेमें कोई भी प्रकारकी हरकत नही है. वैसे ही यह कुछ अतिशयोक्ति भी नही.

विशेषः—मनुष्यमें विकाश होनेवाली जो शक्ति है, उसीके विकाशके वास्ते स्थुल खुराक से अधित्तर (विशेषतः) है, मानसिक खुराककी इस खुराक ही को मनुष्यको जादातर जरुरियांत है।

इसी अैसी प्रमाण सेः—उन (महात्माओ) की समज भावना शोध और साधन उच्च कोटी के और अधिकतर होते रहने से उनके अन्त:करण विशुद्ध अैसे होकर वह सभी के कर्ता-हर्ता. और अधिष्ठाता खुदामय (प्रभुमय) बनकर रहे हुये थे. और है। इसीसे उन्होने विकासीत होनेवाले रोप (छोड) में हालती बनस्पतिमें, सुन्दर खेतो आमदानीमें, और मानव चारित्र्यमें उसी एक परम परमेश्वर (अल्लाह-गोड) खुदापाक, शक्ति, महाका दर्शन किया.

प्रत्येक झरनेमें, नक्षत्रमें, पुष्पमें झाकल बिन्दु (सबेरे की समयमें पडनेवाला ओस, बिन्दु, बुन्द) में, प्राणो हृदयमें, उसी एकका ही प्रतिबिम्ब देखां और पाया.

वह मानने थे किः—मानव प्रकृति और समग्र सृष्टि मानव मात्रकी एक महान शिक्षकरुप है. जो उसीका योग्य सदुपयोग करनेमें आयेगा तो असभ्य रीत-सभ्य बन सकती है.

आप (अपने) बेडोल जीवनको सुन्दर बनावे। सुन्दर जीवनको पवित्र बनावे। और वह सुन्दर पवित्र जीवनको प्रभुमय बनावे। यह इस बातमें शंकाको स्थान नहीं है। याने शंका रहित यह बात है और वैसी ही है विवेकशील.

उपर के विचारोंसे समजमें आता हैं कीः—अपन सभी जो स्थिति जीस वर्तमानमें रह सकते है. उसीसे अधिक...



कक्षामें बैठे हुये है और वैसे ही अपन अन्धःकारमय दुःखदायक खंडोमें भटक रहे है. वास्तेः— ज्ञान–रुपी दिव्य सूर्य के प्रकाशितामें चमकनेवाले चारित्र्यरुपी उच्च शिखर उपर चढजाना चाहिये.

राफेल भी विना पैसे से श्रीमंत था, सभी द्वार उसीके लिये खुल्ले थे. उसीका सभी दूर आदर–सत्कार (मान–पान) होता था. और वह जहां जहां जाता था, वहां वहां वह सुमधुर भाषामें आत्मज्ञान चारित्र्य और वैसे ही आनंद और शान्तिका वातावरण फैलाता था.

हेन्तो विल्सन भी विना पैसे से श्रीमन्त था. स्वतः के उच्च दरज्जाको भौतिक उन्नतिका साधन बनाने के तरफ उसीको इतना तिरस्कार था किः—जब वह देशका व्हाइस–प्रेसिडेन्ट हुवा और उसीका समारंभ आयोजित हुवा, तब प्रसंग के खास जरुरी खर्च के लिये:—उसीने खतः के मित्रकी पाससे बीस पौन्ड उधार लेना पडे थे. प्रथमतः वह मोचोका धंधा करता था. तब बी वह गरीबोका परम सुहृद मित्र था. व्हाइस प्रेन्सीडेन्ट होने के बाद भी प्रत्येक कायदे बावद वह हमेशा यही पुछ–परछ करता था किः—क्यों ? इसी कायदे से गरीबोका भला होगा की नहि ?

जो अपन बौद्ध गौतम, शंकराचार्य, महावीर क्राइस्ट, शम्सतब्रेज (पीरशमस) वगैर इ. त्यागी महात्माओंका अनुकरण करके उनके जैसे उदार स्वार्थ त्यागी और प्रामाणिक बनेंगे तो अपने पास धन–पैसा न होते हुवे भी अपन भयंकर श्रीमन्त की गिनतीमें गिना जा सकेंगे.

लगभग हर एक मनुष्य स्वतःकी पास जीतना धन होता है, उससे अधिक धनकी आंस करता है. लाखो और करोडो मनुष्य धनके पिछे दौडते हुये नाशीगात हुवे है. धन के पिछे दौड़ लगाकर बरबाद हुवे हैं. इतना होते हुये भी धन के पिछे की किसीकी भी भुख और तृष्णा अभितक न गयी. और न यह वर्तमान कलीयुग जमानेमें (भविष्यमें भी) नही जायेगी.

केरोसिन (घासतेल) गिरने पर जैसी आगकी ज्वाला बढे



जाती है, वैसी ही तृष्णा भी उत्तरोत्तर बढते हुवे जबरदस्त राक्षसकी समान होती है. यह लौकिक सम्पत्तिरुपी ढिगार जिस (किसी) को बहुत लम्बे समय तक मिला हुवा है, उसीको भी उसके तृष्णारुपी शरीर से भी छोटा ही पड़ता है.

फिलिफस बुक्स कहते है कि:—जैसी सुन्दरताकी पेटी भरी नहो जाती, वैसे ही सद्गुणोका जहाज भराया नही जाता। वैसे ही पैसे की तरफ से किसीका भी मन भराया जाता नही.

केस्पीयन समुद्रमें एक जहाज डुबने की तयारीमें था. तब खलासीयोंमें से एकने आतुरता से खिस्सेमें पैसे भरने लगा तब उसके साथीयोंने उसीको होडीमें स्वतः को साथमें बैठ करके जीव बचानेका कहा। परन्तु, वह पैसेकी लोभमे उस जहाज का त्याग न कर सकाः और शेवट वह उसी जहाजकी साथ डुबकर मर गया.

एक निर्धन मनुष्य कोः—धन पैसा चाहिये था. इस मनुष्य को एक अनोळ खिता मनुष्य मिला: उसीने उस धन के जरुर मन्द व्यक्तिको एक पैसे की थैली देकर कहा कि:—इस थैलीमें से जब इच्छा करोगे, तब एक एक रुपिया मिला करेगा परन्तु शर्त इतनी थी कि:—उसी थैलीको जबतक फेंकोगे नही तबतक एक भी रुपिया खर्च करना नही.

प्रथम धन के जरुर मंद मनुष्य को बहुत ही राजी खुशी हुयी. और वह उस थैलीमेसे रुपिया पिछे रुपिया निकालने लगा. अमुक काम पुरती रकम रूपिया जमा होगा. तो उसके व्याज उपर मौज शौक करते रहुंगा। ऐसे इस बिचारसे उसीने पैसा वापरना तहकुब (मुल्तवी) रखा और इस तरफ मनमें ठाणी हुयी (निश्चित की हुयी) रकम जमा होने के बाद पहेले प्रथम वह जीतना जरुर मन्द था. उससे अधिक बन गया.

उस धन लोभी मनुष्यको जीतनी आसथी उससे अधिकतर उसके मन मे अनेकानेक बिचार आया करते थे. इस प्रमाण से उसका धनका लोभ हजार से लाखोतक और लाखों से



करोडोतक पहुँच चुका. फिर भी वह पैसा मिला हुवा वापर्नेका उसका बिचार मुलतवी रख्खा छोडे. अन्तमें आयुष्य खुट गया. और वह रुपिया गिनते गिनते ही मर गया.

एक समय एक भिक्षुक को लक्ष्मिदेवी प्रसन्न हुयी तब लक्ष्मीदेवीने कहां कि:–तेरी झोलीमें तू कहेगा. उतनी सुवर्ण मुद्रा भर देने के वास्ते मै तय्यार हूं। परन्तु शर्त इतनी है कि तेरी झोलीमेंसे जमीन पर पडेगा उतना धुल-मिट्टी बनेगा. फिर भी तब वह भिक्षुक खुश मिजाजी होकर लगा झोलीमे पैसे भरने. झोली भर गयी. परन्तु उसकी तृष्णा न मीटी. नंतर पैसेकी बोजसे झोली फट गयी और झोलीमेंका सभी पैसा जमीन पर गिर पड़ा. और सब पैसा धन धुल-मिट्टी हो गया.

जब "सेन्ट्रल अमेरीका" नामकी आगबोट डुबनेकी तय्यारी पर आ गयी, तब उसकी व्यवस्था रखनेवाली स्त्रीने जीतना हाथमें आया उतना सारा द्रव्य कपडेमें बान्ध लिया, और आगबोट को छोड़कर शेवटकी होडीमें बैठने के वास्ते कूद पडी. परन्तु धनकी बोज के वजह से उसकी छलांग होडी तक पहुंच न सकी और आखीर दरियावमें गिरकर मर्महिन हो गयी. मर गयी.

असंख्य मनुष्य इस जीवनरुपी मधपुडामें से मधमाखीयों के डंख खाये बिना ही मध मिलाने के वास्ते कुदा कुद-दोडा-दौड़ कर रहे है.

नंद राजाने धनमें सुखका संशोधन किया. ब्रुटेने किस्तीमे सुखका संशोधन किया। सिजरने राज्य वृद्धिमे सुख शोधन किया। परन्तु इसीमे से इन सभी को विनाश ही मिला। दुसरेको अपमान मिला, तिसरेको तिरस्कार मिला. और शेवट नंबर को कृतघ्नता मिली। ऐसे इसी हिसाबसे जहाँ सच्चां सुख नही. वहां सुख शोधनेवाले नाहक दौड़धाम करते हुये आखरीमें फनाह हो चुके है. याने जैसे आये वैसे ही. खाली हाथ चल दीये.

डॉ. गोल्ड स्मिथ को एक गरीब स्त्रीने एक पत्र लिखा कि:—मेरी पतिकी भुख मर गयी है, और बहुत ही शोकदायक



स्थिति है, वास्ते कुछ दवा भेजोगे तो बहुत आभार होगा, तब उसी वक्त वह दयालुं कविने उस बाई के घर जाकर दरदी के साथ बात-चित्त कीः—तो मालुम हुवा किः - वह दरदी निर्धनतासे दुःखी...दुःखी हो गया था। फिर जब गोल्डस्मिथ-घर जाकर एक डीबीमें दस गिनी (एक गिनी एक तोला सोनेकी हुवा करती है ऐसे दस तोले सुन्नेको) भरकर और उस पर एक चिठी चिपका कर भेज दी गयी किः—जब जरुरत पडे तब वैसा इसका उपयोग करना, धीरज रखना, इससे जरुर सब व्याधि मिट जायगी.

इस उल्लेखमें से अपने को एक ही सिर्फ एक ही बाबद याद रखने लायक है किः—"सुख" धनमें नही। परन्तु धैर्य, संयम और स्वार्थ त्यागमें ही है।

धन के बिना श्रीमन्त कैसे बनना ?
कहो कैसी बात है ?

१४ मनुष्य और दुःख

मनुष्यका जीवन घडण करनेमें दुःख ही मुख्य भाग कार्यान्वित कार्यकर है। जन्म के साथ ही मरण जोड दिया गया है। दुःख की साथ सुख जोड दिया गया है वास्तेः—

दुःखको केवल दुश्मन न मानते हुये। सुख के वास्ते आकर मिली हुयी एक शानदार तक समझकर इसीका किस रीति से लाभ लेना चाहिये ? यह ऐसा विवेक विचार से सोच-समजपूर्वक वर्ताव करना जरुरी है. मनुष्य जाति और दुःख इनका सम्बन्ध दीर्घ है। मनुष्य जाति के साथ सुख अल्प और दुःख विशेष जुटा हुवा है। मनुष्य दुःखको दुश्मन और सुखको स्वमित्र समझकर बैठा है। परन्तु 'सत्य' हकिकत सत्य रीति से देखो तो मनुष्य जीवनमें दुःख ही अगत्यका है, कारण कि जीवनकी घडाई दुःखकी मार्फत से ही होती है। सोना अनेक प्रकारकी कसोटी सहन करके अजमाइसका स्वरुप धारण करता हैं। वैसे ही कसोटी पर मनुष्यने दुःख की असंख्य यातनाओं से कसोटी जैसा सहन करके सुखकी प्राप्ति कर सकता है,



मनुष्य जीवनमे सुख और दुःख चक्र की माफक चलते ही रहते हि, जीवनकी जब चान्दनी खिल उठती है तब मनुष्य खुश खुशाल ऐसा नजर आता है। और जब दुःख का दर्शन करनेका समय आता है, तब वही मनुष्य निरस-अनुत्साही, निस्तेज ऐसा नजर आता है।

इसीका मूल कारण कि:—मनुष्य केवल सुखको ही याद किया करता है। सुखकी प्राप्ति के लिये मनुष्य रात और दिन अथाग परिश्रम करता है। फिर जमा खर्च करने के बाद शिल्लक में उसीको दुःख ही मिलता है। परन्तु सच्चा सुख स्वाद के वास्ते:—दुःख अनिवार्य है। दुःख सुख की मिठाश अनुभव लेने के बाद ही होती है। जाद्दात्तर समय तक तो दुःख मनुष्य को नया ज्ञान देकर चला जाता है कि—तब ही जीवनमें सुख उपयोगी हो जाता है।

मनुष्य जीवनकी यह विचित्रता है की:—सुखी मनुष्य दुःखी मनुष्यकी स्थितिको समज सकता नहि। श्री धुमकेतूका एक वाक्य चिल्ला, चिल्लाकर समझाता है कि:—जो मनुष्य स्वतः की दृष्टि छोड़कर दुसरे की दृष्टि से देखे तो आधा जगत शान्त हो सकता है। सृष्टि उपरसे दुःखकों जड-मूल से नाश करनेका यही एक सुन्दर किमिया है।

मनुष्यने स्वयंकी स्थिति अनुसार पराई स्थिति बाबद समजनेका प्रयत्न करना खास जरुरी है।

दरदी को उसकी दर्दका जो दुःख होता है, उसकी तनदुरुस्थ मनुष्यको क्यो कर खबर पडेगी? दुसरेकी दृष्टि से देखनेकी उणप (कमतरता) से अपनी आँखो की रोशनी प्रकाशित कर सकते नही। एक मनुष्यने दुसरे मनुष्यकी यातनाओंको समजनेका प्रयत्न करना आवश्यक जरुरी है। एक मनुष्यने दुसरे (सामनेवाले) मनुष्य के जीवनमें उतर जाना चाहिये कि:—जिससे सच्ची परिस्थितिका ख्याल होवे, ऐसा हो तब ही एक मनुष्य दुसरेका भला कर सकेगा और ऐसे इसी बातोके परिणाम से ही सुखको समृद्धि बढेगी. इसीके समर्थनमें सॉक्रेटिसका एक अमूल्य दृष्टान्त यहाँ पर योग्य हो जायगा।



एक समयमें सॉक्रेटीसको स्वतः के शिष्य समुदायमें से एक शिष्यको पसन्द करनेका था। तब उस (सॉक्रेटीस) ने नंबर वार स्वतः के शिष्यो को तलावकी पाणीमें क्या दिखता है? वह देखकर आवो, ऐसा कहा तब सभी शिष्योने देखकर आनेके बाद एक ही जवाब दिया की हमको हमारा ही प्रतिबिम्ब दिखता है। परन्तु उसीमेंसे एक शिष्यने कह दिया कि:— मेरे को पर छाई से विशेष मछलिया स्पष्ट दिखाई देती हैं। तरत ही सॉक्रेटीसने उसको स्वतः का शिष्य बना लिया। कारण वह स्वतः से विशेष दुसरेको अच्छी रीतिसे देख सकेगा। तभी वह स्वतः का और साथ दुसरेका भी भला कर सकेगा।

सुख और दुःख क्या है? ऐसा प्रश्न स्वाभाविक रीतिसे हो सकता है। इसीका सुन्दर प्रत्युत्तर कोई महापुरुषने दिया है कि:—सुख और दुःख यह मन (कुभार) के चाक परसे उतारे हुये. मिट्टीके खिलौने जैसे है। मनरुपी चाक घुमते-घुमते एक के बाद दुसरा खिलौना तैयार होकर उतरने लगता है। चाक बंध होगा तो यह खिलोने उतरना भी बंध हो जायेगे। मन घुमता फिरता है, तब सुख और दुःखकी धुप-छांव दिखती है। परन्तु जब यह मन स्थिर होगा तब वह धुप-छांव भी बंध हो जायगी। इस बाबतमें सद्भाग्य जिस (किसी) का जो मन स्थिर हो जाय तो मनुष्य महा सुखीयारा बन जाय.

सुखकी प्राप्ति तो दुःखके पिछे से ही हो सकती है। दुःख वगैरका सुख अलभ्य है। दुःखरुपी तापमें तपकर ही सुखका सोनेरी पुष्प किस रितीसे प्राप्त करना इस विषयमें पू. गांधीजीने कहीं है कि:—

दुःख हर एकको दुश्मन जैसा लगता है। परन्तु दुसरी और बाजुसे देखो तो, मनुष्य जीबनको घडण करनेमें दुःख ही मुख्य भाग कार्यान्वित कार्यकर है। जन्म के साथही मरण जोड दिया गया है। वैसे ही दुःख की साथमें सुख जोड दिया गया है। जो मृत्यु न होता तो पुनर्जन्म न होता। इसी रीतीसे दुःख न होवे तो सुख भी नही होता। वास्ते दुःखको केवल



दुश्मन न समजते हुये, न मानते हुये सुख शोधन करने लियेः—आकर मिली हुयी एक महान तक समझकर इसका कि प्रकार लाभ फायदा लेना चाहिये। उसका विचार करना जरू है। जैसा अपन विवेक-विचार वैसे ही आनन्द एवं शान्ति आचरण करोगे तो, जरुर एक दिन इसी विवेक-विचारमें सुखका जन्म होगा।

सुखकी प्राप्ति के वास्तेः—इतना ही याद रखना जरू है की दुःखमें हिंमत, धैर्य रखकर अन्योन्य मुसिबतोका सामन करके यही दुःखमेंसे सुख के मार्गका शोधन कर सकते है।

१५ शिक्षक और शिक्षण

"शिक्षकका कर्तव्य—दो जाति के शिक्षक उनका कर्तव्य"

१. बेहोश (अध्येयवादी) २. बाहोश (ध्येयवादी)

बेहोश शिक्षक के लक्षण

१. बेहोश = अध्येयवादी—शिक्षक स्कूलमें जाते ही हाथमें बीडी या, सीगारेट होना ठीक है, नहीं तो एक हाथमें बोर्ड और दुसरे हाथमें पेन (कलम) पकडकर समय पत्रक के सा टाइम पूरा करना है, बिचमें एकाद पिरीयड (पाठ) अगर उसि भी ज्यादा समय निरर्थक गप्पाओंमें निकालते है।

२. अभ्यास-क्रमका जीनको भान भी रहता नही, औ विशेषमें कहो तो; अभ्यास-क्रम पत्रकका जिन्होंने दर्शन भी न किया हो, तो भी भरती की गाडी के समान स्वयं मन-स्वि पणा से शिक्षणकी गाडीको जबर दस्ती से हकाले ही जाते है

३. व्यसनः—चाय और बीडी को चालू कलास (वर्ग) में विद्यार्थी के समक्ष छडे-चोक उपयोग करते है। इतना ही नही परन्तु अधिकारीयोंके भेटमें भी अकस्मात झडपमें आते है, फिर भी नही शरमते।

४. जिनके पोशाखमें, रहन-सहनमें कुछ ठिकाना ही नहीं है। देखावा भी कदाच बेढंगा हो, वाणीमें कर्कशता है, नंतर चारित्रहिन है। शिक्षणकी जिसको पडी ही नही। फिर ऐसी देश-सेवा किस कामकी?



५ समाजमें जो शुद्र-धूर्त गिनाये जाते है। भावी पिढिका नाक कट जाय, तो भी उस शिक्षकको न कुछ लेना है और न कुछ देना है।

६. शिक्षक निरुत्साही है, जो कीः—स्वयं स्वतः की कार्यमें भी पिछेहट करता है। और शिक्षणकी तरफ जिस किसी शिक्षकको अभाव है, बेदरकारी है. स्वमानको जो कुछ समजता हि नही। जो देशकी तरफ बेवफादार है, भावी पिढी के कल्याण के लिये जो शिक्षक सोता है, ऐसा शिक्षक स्वयं-स्वतः के दुःख को जहां-तहां जिस-किसी के भी सामने रोने ही रोनेका गीत गाता है।

७. भावना जिसको सिखानेको हो, वह पैसे की पैदाश करनेमें कदाच समजदार हो, परन्तु जिसका अव्यवस्थित खर्चीला जीवन अगर तो, जोसको आवक-जावकका भान न हो।

नोटः—यह लक्षण स्कूलमें पढाई करते समय-चालू कलासमें भी हो सकते है।

बाहोश (ध्येयवादी) शिक्षक के लक्षण

१. बाहोश = ध्येयवादी शिक्षक स्कूलमें नियमित जाते है। और आते है।

२. स्कूलमें जाकर समय-पत्रक वरहुकम प्रमाणे स्वतः के कलास (वर्ग) में शिक्षणका काम चालू करते है।

३. नियमित अभ्यास-क्रम प्रमाणे पूर्व तैयारी करके शिक्षण देते समय उत्साह निर्मित होते है।

४. शिक्षकचाय, बीडी पिने के व्यसनाधिन होते हुवे भी शिस्त पालन करते हैं।

५. हमेशा स जागृत रहते है। शिक्षकः—शिक्षण जैसे पवित्र धन्धेको शोभे वैसा पोशाख-देखाव; वाणी, शीलता, जिसका चारित्र्य आदर्श हो। शिक्षणकी कार्यमें जो हमेशा मश-गुल है। जिस (शिक्षक) की रगरगमें देश-सेवाकी भावना भरी हुई हो। शिक्षक आनन्दित है। इन (शिक्षक) को इनके



पवित्र धःधेमें कार्य करनेकी धगश (हिंमत) हो। शिक्षक स्वाभिमानी होना चाहिए, इनको स्वतः की तरफ सुप्रत की हुई भावी पिढो के उत्कर्ष के लिये उन शिक्षक को तमन्ना होनी चाहिये।

६. समाजमें स्वयं-स्वतः का वर्चस्व बढानेकी समजदारी कि:—जिनमें हुन्नर और कला होनी चाहिये। उगती-उछरती भावी पिढी के कल्याण के लियेः—जिस शिक्षकको ख्याल (लक्ष) और प्रेम हो।

७. भावना शील हो, पैसे की पैदाश करना। यह जैसा बुद्धिवादी हो, वैसे ही खर्चका भी हिसाब हो।

शिक्षक की भावना

शिक्षककी भावनाः--बगिचे के 'फूल' समान जैसे मेरे हाथ की निचे शिक्षण लेने वाले बालको के जीवनमें मेरा संस्कार छिटकनेका यत्न-प्रयत्नमें अवश्य करते रहुंगा। केवल टयुशन-लक्षी नही बनुंगा।

फाजिल (रिकामे) समयमें मेरे मोहल्लेके आबाल-वृद्धो को जीवन-लक्षी शिक्षण देनेका ख्याल करते रहुंगा। और ऐसे ही आते हुये दिनकी नागरिको की पढाई-घडाईके कार्यमें मेरा नम्र फाला नोन्ध पात्र करुँगा!

माता-पिताका कर्तव्य पालन

पूज्य माता-पिताका कर्तव्य पालन और यही है बच्चोंको शिक्षण!

१. सवेरे के प्रहरमें उठकर शौच-अशौचका विचार करते हुयेः--विस्तार से अलग होना चाहिये, बाहर जंगल-दिशा जानेकी इच्छा न होते हुवे भी प्रथम प्रहरकी समयमें आरोग्य की दृष्टिसे शौचाचार करना जरुरी है। नंतर हाथ-मुह धोकर मन्जन जो हो उसीसे दांत घिसकर बादमे मुह हाथ पैर और स्नान से स्वच्छता साफ सुथरेपणासे घरके सभी छोटे-बडे व्यक्तिओं एक जगा मे इकट्ठा (संगठीत बैठक) होकर जिस



किसीको जितना समय मिले उतने ही समय उसी (हर एक व्यक्ति) ने वह परम कृपालु परमेश्वरकी आराधना-बन्दगी, भक्ति-प्रार्थना करना जरुरी है । यह देखकर छोटे छोटे बच्चे इसी संघठीत कार्य करनेमें सामिल होने लगते है, जुटते है ।

२. उन (बच्चो) को दररोज परमेश्वर प्रार्थना-बन्दगी करनेके वास्ते शिक्षण देना मा-बापका प्रथम जरुरीयात आद्य-कर्तव्य है, इस बात पर मा-बापने जरुर ख्याल करना चाहिय कि:—प्रथम मा-बापने भो परमेश्वर प्रार्थना-बंदगी करनी चाहिये । मां-बापका पेसा करने से छोटे बच्चे भी शिख पायेंगे और उन बच्चोकी इस बाबदमें अच्छी आदत पड जायेगी । परन्तु इस आदतमें लालच न हो ।

३ बालक छोटासा होता है तभी से माताजो बच्चोंको दोनो हाथ जुडाकर उसीको स्वतः के पास गोदमें लेकर घुटने पर बिठाकर उनको वह परम जगतिपता परमेश्वरकी बोध-बचन सिखना चाहिये । बन सके तो सिधी-सादी और छोटी मोटी प्रार्थना-बन्दगी के कुछ वाक्योका उच्चार करने सिखाना, बोलने लगाना, और उसीका अर्थ-भावार्थ भी समझाते रहना चाहिये ।

४. प्रार्थना-बन्दगी:—कुछ मुहसे बडबडाट करने जैसी नही है । परन्तु प्रथमत। समज के साथ सच्चे अन्तःकरण से प्रार्थना-बन्दगी करना याने, नहाना-धोना शरीर-कपडे सिर्फ स्वच्छ बनाना इतना ही नहो । परन्तु अन्तःकरणको भी साफ करना जरुरी है । बहुत सारे लोग प्रार्थना-बन्दगी करते करते रीत-रिवाज उपर लक्ष देते है, और वैसे ही प्रार्थना बन्दगी के समय में:—प्रार्थना-बन्दगी की जगह (ठिकाणे) पर ही से गाली बकवा करते हुवे अकस्मात; एकाएक नजर आते है। यह कुछ प्रार्थना बन्दगी नही कहेलाती है। परन्तु एक जातका निति-नियमोका शिस्त पालनका भंग करना है। ऐसी हालतमें वह उसी परम परमेश्वर परवर्दिगार को याद करना, याने-प्रार्थना-बंदगी पुजा-पाठ करना कैसा हो सकता है ?



५. प्रार्थना-बन्दगीको तो एकान्त और एकचित्त की बिशेष प्रमाणमें आवश्यकता होनी चाहिये। सच्चे अन्तःकरण से बच्चो के पास से प्रार्थना-बन्दगी करने करानेका सभी आधार माता-पिता उपर रहा हुवा है।

६. प्रार्थना-बन्दगी-शुरुआत करने के प्रथम जो गंभीर, शान्तचित्त बनकर बालकोको भी शान्तचित्त बनाना चाहिये। यह ऐसी कोशीस करोगे, तभी असरकारक प्रार्थना-बन्दगी होगी। और तभी धर्म-न्याय निति, विषयोंमें बच्चोको समज आतो है। इसी रीत-रिवाजो से हर किसोकी आस्था बढेगी। और जब खात्री विश्वास भी होगा।

७. सबेरे उठते समय, भोजन करते समय, वैसे ही रात्रीको सोते समय, हरएक समय जरुर जरुर कुछ ना कुछ वह उस परम परमेश्वर परवर्दिगारको याद तो जरुर करना ही चाहिये। और आजका एक दिन खुशो-के साथ पसार हो गया इसी वास्ते उस परम परमेश्वर परवर्दिगारका बहुत भारो उपकार मानना चाहिये। हररोज नियमित रोज से और रितसर घरकाम-काज व्यवहारादि एवं परमेश्वर प्रार्थना बन्दगी करना जरुरी हैं। रात्रीको बहुत समय लेना न चाहिये। सबब कि:—रात्री को वह परम परमेश्वर-परवर्दिगार निमित सार्वजनिक संगठित यही सामुदायिक, स्नेह संमेलनमे विशेष समय होनेसे समय ज्यादा होने से बच्चोका सोनेका समय होता है। वास्ते समय-समय पर प्रथम-नंतर सदा सर्वदा?

१६ धर्म एवं दान

ॐ नमो जयश्री हरी ॐ

आजकल धर्मका नाम लेते ही नास्तिक लोग जबान पकड़ने लगते है। और धर्म पर अत्याचार तथा रक्तपात के दोष मढ़े जाते है। परन्तु यह सब बातें तर्कहीन और ना समजकी है। और धर्मको न समजने के कारण ही कही जाती है। यह कटुता तथा भेदभाव पैदा करनेवाली कोमवादरुप तथा हट-



वादिता मात्र है। धार्मीकता नही है। इस विषयमें एक विद्वान का मत प्रगट करना होगा कीः–मजहब सांप्रदाय तथा रिलिजनकी बातो पर वाद–विवाद और मतभेद हो सकता है। परन्तु धर्म तो नित्य है। वह अनित्य जीवनसे कहो अधिक मुल्यवान है।

धर्म कहता है किः—स्वयं रहो तथा दुसरो को भी स्वयं रहने दो। मजहब तथा मतवादका नाम धर्म नही है।

धर्म तो वह वस्तु है कीः—धर्मेण हीणाः पशु भी समानः।

अर्थातः—जिसके बिना मनुष्य पशु बन जाता है।

मानव इस जगतका एक साधन संपन्न प्राणी है, परमात्माने मानव शरीरको ऐसे साधन प्रदान कीये हैं किः—जिनका सदउपयोग करके वह " अभ्युदय और निःश्रेयस " दोनो प्राप्त कर सकता है। मानव जीवन वह चौराहा है, जहांसे देवलोक, ब्रह्मलोक, वैकुठधाम, गोकुळधाम अथवा मोक्षधामको भी जानेका मार्ग मिलता है। वही से भिषण नरक और कीट पतंग आदि योनियोकी और जानेका मार्ग भी सरलता से सुलभ होता है। उसके एक और सुखके साधनो से सम्पन्न समुन्नत शैल शिखर है, जिस पर प्रयत्न–पूर्वक उस उपर चढना चाहीये। और दुसरी ओर अत्यन्त गहरी खाई है, जिसमें तनिक–सी भुलसे गिरकर सर्व नाश के मुखमें पडने की प्रतिक्षण आशंका हैं। ऐसी स्थितिमेंमानवको बडी सावधानी के साथ अपने लक्षको चुनने और उसकी ओर पैर वढानेको आवश्यकता है, सबसे पहले उसे अपने आपको पतनसे बचाकर सुरक्षित रखना है। गिरने या उंचे चढने से पूर्व अपनी वर्तमान स्थितिको सुदृढ करना है। अपने आपको धारण करने से ही हम पतनसे बचकर सुरक्षित रहना है। गिरने या ऊँचे चढने से पूर्व अपनी वर्तमान स्थिति को सुदृढ करना है। अपने आपको धारण करने से ही हम पतन से बच सकते है, और उत्थानकी दिशामें अग्रसर हो सकते है। जगतको धारण करनेकी शक्ति केवल धर्ममें ही है। धारण करने से ही उसका नाम 'धर्म' हुवा है।

'धारणा द्धर्म मित्या हुधर्मोः धारयते प्रजाः' धर्म के बलसे



ही संसार टिका हुवा है: धर्मका आश्रय न होतो एक क्षण भी उसको सत्ता नही रह सकती। इसलिए:—विश्वंभर भगवान बिष्णुं जब विश्वकी रक्षा के लियेः—अवतार ग्रहण करते है तब सबसे प्रथम धर्म संस्थापनाकी ओर ही ध्यान देते है।

धर्मका मुख्य अधिकारी मानव है। उसीका स्वयं शरीर ही "धर्म-क्षेत्र" और "कुरू-क्षेत्र" है। पशुओ और मनुष्योंमें कोई अन्तर है तो वह "धर्म" को लेकर ही है।

घृतिः क्षमा दमोऽस्तेय शौच मिन्द्रय निग्रहः।
धी विंद्या सत्यमऽक्रोधो दशंक धर्म लक्षणम्॥

१ घृति-धैर्य २ क्षमा-सहनशिलता ३ दम-मनको वशमें रखना ४ अस्तेय-चोरी न करना ५ शौच-बाहर भितरकी पवित्रता ६ इन्द्रीय निग्रह-इन्द्रीओको वशमें रखना ७ धी-सात्वीक-बुद्धि ८ विद्या-सात्विकज्ञान ९ सत्य-सत्य बोलना १० अक्रोध-क्रोध न करना यह दश लक्षण धर्म के बताये गये हैं।

इन धर्म के दश लक्षणोंमेंसे "सत्यान्नास्ति परोधर्म" सत्य से बढकर संसारमें दुसरा कोई अन्य धर्म नही है। सत्य ही परमेश्वर है वेद कहते है कीः—"सत्यम् वद. धर्मचर" सत्य बोलना चाहीये, और धर्म से चलना चाहीये, सत्यान्न प्रमदितव्यम्-सत्यसे प्रमाद् नही करना "असत्य न वदेत्" याने झुठ न बोले "एष वैदिक सनातनो धर्मः।" ऐसा वेदोक्त सनातन धर्म है।

सत्यव्रत पालन करनेसे धर्म के सभी लक्षण मनुष्यमें उसी प्रकार आकर मिलने लगते है, जैसे महानद मे लघुसरिताये। ऐहिक पारलौकिक सुखका मुल साधन "सत्य व्रत पालन" ही है। आजकाल यह कठीण कलीकाल चल रहा है। यद्यपि मुक्ति एव भगवत-प्राप्ति के साधन पुराणोमें हर प्रकार से विधान वर्णित है। किन्तु यही कलीकालमे उनका पालन करना अत्यन्त कठीन है, अतः इन्हीं सारी कठीनाइयोंको देखते हुये कलीकालमे सत्य व्रतका विशेष महत्व है।



१७ धर्मोहि तेषामधिको विशेषः

सत्य, व्रतके पालनसे मनुष्यमें मानवताका विकास होता है। और उसीके द्वारा अपना तथा जगतका संरक्षण होता है, उपर बताये हुये धर्म के जो दश लक्षण है, अतः यह मनुष्य मात्र के लिये अपरिहार्य आर्य (सनातन हिन्दु) धर्म है, इन सभीको हम गुणरुप धर्म कहेते हैं। हमे यहाँ क्रियात्मक धर्मोंमें से मुख्य धर्मको चुनना है। मनुने संपूर्ण वेद-स्मृति वेदज्ञ पुरुषो के शील सत्पुरुषों के आचार और विचार-मनकी प्रसन्नता इन सबको धर्मका मुल बताया है। येही धर्मको लक्षित करानेवाले है। परन्तु इन सबमे वेद की ही प्रधानता है।

धर्म जिज्ञास मानानां प्रमाणं परमं श्रुतिः।

अतः हमें सबसे पहले वेदोंमें ही यह ढूँढना है कि मनुष्यके लिये मुख्य धर्म क्या है। धर्मका लक्षण बतानेवाले आचार्योंने उसेः—अभ्युदय और निःश्रेयका साधन बताया है।

यतो अभ्युदयनिः श्रेयस सिद्धिः स धर्मः।

दुसरे शब्दोंमें लोक और परलोकका सुधार ही धर्मका लक्ष्य है। ईश्वर मनुष्य शरीरको परम दुर्लभ बताया गया है। "नरत्वं दुर्लभ लोके" बडे भाग्य से इसको प्राप्त होता है। अतः इसको अैसे धर्ममें लगाना चाहीये। जो इसकी प्रतिक्षा और प्रतिष्टा अनुरुप और उसे सार्थकता बनानेवाला हो। यह तो निर्विवाद सिद्ध है कीः--मानव जन्मको सार्थकता तभी होगी जब वह मोक्ष या भगवत प्राप्तिकी साधनामे लगे। सबसे पहले हम वेद भगवानसे पुछते है किः--हमारा मुख्य धर्म क्या है। वे उत्तर देते हैं।

ईषा वास्यमिदं सर्वं, यत्किंच जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुन्जीथामां गृधः कस्य स्विद्धनम्॥
(य. स. अ. ४० मं.)

अखिल विश्व (ब्रह्माण्ड मे जो कुछ भी है यह चरा चरात्मक जगत तुम्हारे देखने-सुननेमे आ रहा है। यह सब सर्वात्मा परम परमेश्वर से व्याप्त है। उन परात्माको अपने साथ रखते



हुए तुम प्राप्त धन सम्पतिका त्यागपूर्वक उपभोग करो, जितना तुम्हारे निर्वाह मात्रके लिये आवश्यक है । उतने से अधिकको तो अपना मानो ही मत, वह भगवानको वस्तु है, उसे चराचर विश्वमें व्याप्त भगवानकी सेवामें लगा दो । निर्वाह मात्र के लिये जितना आवश्यक समजते हो, उससे भी पन्च यज्ञादिके द्वारा त्याग पूर्वक प्रसाद रुपसे अपने उपयोगमें लावो । निर्वाह से अधिक धनकी आकांक्षा या लोभ न करो । भला धन किसका है ? किसीका भी नहि । धनके स्वामीतो एक मात्र लक्ष्मीपति भगवान है । श्री भागवतमें तो यहां तक कहा गया है कि:—

यावद् म्रियेत जठरं तावत्स्वत्वं हि देहोनाम् ।
अधिक योऽभि मन्येत स स्तेनो दण्ड मर्हति ॥

जितने से पेट भरे उतने से ही अन्न=धन पर देहधारिका अधिकार है । उसे अधिक जो अपना मानता है वह चोर है। उसे दंड मिलना चाहिये ।

उपर्युक्त वेद मन्त्रसे परमात्मा चिन्तन और त्याग इन दो बातों की आज्ञा मिली है, उसी अध्यायके दुसरे मन्त्रमे यह बताया गया है कि:—उन परमेश्वरकी पुजाको निमित्त शास्त्र नियत कर्तव्य कर्मोका आचरण करते हुए ही सो वर्ष तक जीनेकी इच्छा करो ।

कुर्वन्नेवेह कर्मांणी जिजी विषेच्छत हूं समाः ।
एवं स्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कम लिप्यते नरे ॥ (इश. २)

इस प्रकार परमेश्वर के लिये त्याग भावसे किये जानेवाले कर्म तुम जैसे मनुष्यमें लिप्त नही होगे । तुम्हें बंधनमे नही डालेगे । कर्म करते हुए कर्म से लिप्त न होनेका यही एक मार्ग हैं दुसरा नही ।

असुर्या नाम ते लोका अन्धेन तमसाऽऽवृताः ।
ताऽस्ते प्रेत्याभि गच्छन्ति एके चात्महनो जनाः ॥



वेद भगवान कहते है कि:—जो त्यागपूर्वक परमात्मा चिन्तन अथवा कर्तव्य-कर्मोके पालन द्वारा भगवानकी आराधना करके इस संसार सागरमेंसे मुक्त होने या भगवानको पानेका प्रयत्न नही करते, उन्हें विवेकी पुरुषोने आत्महत्यारा कहां है। ऐसे आत्महत्यारेको मृत्युके पश्चात घोर अंधकारमय नर्ककी प्राप्ति होती है।

इन मन्त्रोकी अलोचना से यह निष्कर्ष निकला है कि:— मनुष्य मनसे परमात्माका चिन्तन तथा शरीर से उस सर्व व्यापी परमेश्वरको आराधना के लिये शास्त्रविहित कर्म करे. वेद के पूर्वोक्त मन्त्रसे जिस त्याग की ओर संकेत किया है। उसका बहुत बड़ा महत्व है। उसे परमात्माकी प्राप्तिका साक्षात साधन बताया गया है। त्याग से इच्छा असक्ति मोह ममता और अहंकार के त्यागका प्रदिपादन तो होता ही है। उसके द्वारा दान धर्मकी महिमा पर भी प्रकाश पडता है। अनेक स्थलोमें "त्याग और दान" पर्याय वाची माने गये है। मनुष्य स्वभावसे ही धन के उपार्जन और संग्रहका प्रेमी होता है। कुछ लोग तो चमडी जाय पण दमडी ना जाय। याने चमडी देकर भी दमडी नही देते। दमडी देना नही चाहते। ऐसे लोगोकी दान के द्वारा ही त्यागमें प्रवृत्ति होती है। इसीलिये वेद शास्त्रोमें दान धर्मकी बड़ी महिमा बताई गई है। दान-वीरोकी यशो गाथाओसे हमारे इतिहास पुराण भरे पडे है। देवता मनुष्य और असुर जब प्रजापति के पास कर्तव्यका उप-देश लेनेके लिये गये, तब उन्होंने तिनों के लिये एक ही उपदेश किया "द" इस 'द' का अर्थ देवताओने इन्द्रिय दमन ऐसा समझे असुरोने दया माना, और मनुष्योने उस 'द' को अपने लिये दानकी प्रेरणा समझी (देखीये वृहदारण्यक ५-२, १-३) इसी तरह प्रजापतिकी ओर से मनुष्यको सर्व प्रथम दान धर्मका उपदेश प्राप्त हुआ हैं। दान कैसे देना चाहिये इसकी शिक्षा तैतिरीय उपनिषद के द्वारा प्राप्त होती है।

श्रद्धया देयम्, अश्रद्धयाऽदेयम्, मीया देयम!
ह्रिदेयम, भिया देयम, सविंदो देयम्!



१ जो कुछ भी दिया जाय वह श्रद्धापूर्वक देना चाहिये।

२ अश्रद्धापूर्वक नही देना. क्यों कि:—बिना श्रद्धा के दिये हुए दान आदि कर्म असत माने गये है।

३ अश्रद्धा हुतं दतं (श्री गीताजी)।

४ जो देना ही हो तो वह लज्जापूर्वक देना चाहिये. अर्थात सारा धन श्री भगवानका है। इसे मैने अपना समझकर उनका अपराध किया है। इसे सब प्राणीओ के ह्रदयमें स्थित रहे हुए भगवानकी सेवामें ही लगाना उचीत था, मैने ऐसा नही किया, मै जो कुछ दे रहा हूं। वह भी बहुत कम है, ऐसा सोचकर संकोचका अनुभव करते हुए देना चाहिये। मन, मे दानीपनके अभिमानको नही आने देना चाहिये, सर्वज्ञ और सबमें भगवान है। अतः दान लेनेवाले भी भगवान ही है। उनकी बडी कृपा है किः—वह मेरा दान स्वीकार कर रहे है। यो विचार कर भगवान से भय मानते हुए दान देना चाहिये। हम किसीके उपर उपकार कर रहे है। ऐसी भावना मनमें लाकर अभिमान या अविनय प्रगट करना चाहिये नही। परन्तु जो कुछ दिया जाय, वह विवेकपूर्वक उसके परीणामको समझकर निष्काम भावसे कर्तव्य–"कर्मण्येवाधिकारः" समजकर देना चाहिये इस प्रकारका दिया हुआ दान भगवानकी प्रितिका और अपने कल्याणका साधन हो सकता है। वही अवश्यपूर्ण फलका देनेवाला है।

देवता लोग जब राजा नळके पास याचक बनकर आये तब उन्हें उस रुपमें आते देखकर नळ सोचने लगेः—"अहो! ये आप क्या चाहते है, यह मुजे कैसा मालुम हो। और उसे इनके मांगने से पहले ही कैसे इनकी सेवामें समर्पित कर दूं। (यदि कीसी तरह मालुम हो जाता तो में इन्हें मांगनेका अवसर नही देता) उस दाताको धिक्कार है, जो याचकको इच्छाको जानकर भी उसके मागनेकी प्रतिक्षा करता है। (बिना मागे ही नही दे देता)।

प्रतिदिन प्रातःकाल भगवान श्री सुर्यनारायण अपनी स्वर्णमयी किरणोसे भुतल पर उन्नत सुवर्ण राशीकी वर्षा करते है।



जगत के जीवोको नूतन जागरण, नयी चेतना, नवीन प्रेरणा, देकर सबके लिये नित्यप्रति दान-धर्मका उपदेश करते रहते है। शीतरश्मि सुधाकर अपने कमनीय करो से वसुंधरा पर सुधा उंडेलते और महीतल के ही तलको शीतलता प्रदान करते है, पृथ्वी हमे रहने के लिये स्थान, जल, तृप्ति, अग्नि, उष्णता, वायु, प्राणशक्ति और आकाश अवकाश देकर सबके सब समस्त संसारको भगवत प्रित्यर्थ दान यज्ञका शाश्वत सन्देश दे रहे है। भगवदश्चरण चिन्तन और "त्याग" पूर्वक दान ही मानव के लिये मुख्य धर्म है।

स्वधर्म निधनम श्रेयः

१८ प्रार्थना मन मंदिरमें

निरंजन निराकार निर्विकल्प निर्विकार नैसर्गिक परमात्मा का चिन्तवन सार।

जय जय सुर नायक, जन सुखदायक प्रनत पाल भगवंता।
गो द्विज हितकारी, जय असुरारि, सिन्धुसुता प्रियकंता ॥
पालनसुर घरणी, अदभुत करणी, मरम न जानई कोई।
जो सहज कृपाला, दीन दयाला, करउ अनुग्रह सोई ॥

हे देवताओ के स्वामि भक्तोको सुख देनेवाले, शरणांगतोका पालन करनेवाले, भगवान आपको जय हो। हे गौ ब्राह्मणो के हितकारी असूर के वेरी, लक्ष्मी के प्रिय स्वामी आपका जय हो। देवताओंको और पृथ्वीकी रक्षा करनेवाले आपकी लीला अनौखी है। जिसका भेद कोई नही जानता। ऐसे स्वभावसे ही सहज कृपालु और दीन दयालु भगवान हमारे पर कृपा करो।

जय जय अविनाशी, सब घटवासी, व्यापक परमानंदा।
अविगत गोतितं, चरित पुनींतं, माया रहीत मुकुन्दा ॥
जेहि लागी विरागी, अति अनुरागी, विगत मोही मुनीवृन्दा।
निसी बासर ध्यावही, गुन गान गावहि, जयति सच्चीदां नंदा ॥



हे अविनाशी अंतर्यामी सर्व व्यापक परम आनंद स्वरुप अजेय इन्द्रीयोंसे परे, पवित्र चरित्र माया रहीत भगवान वैराग्य-वान् मुनीगण अत्यंत प्रीति के साथ रात दिन जिनका ध्यान करते है अैसे सच्चिदानंदकी जय हो ।

जेही सृष्टी उपाई, त्रिविद बनाई, संग सहाय न दुजा ।
सो करउ अघारी चिन्त हमारी, जानिय भगति न पुजा ॥
जो भव भय भंजन, मुनि मनरंजन, गंजन विपति बरू था ।
मन वच क्रम बानी, छांडी सयानी, सरन सकल सुरजूथा ॥

जिसने अकेले ही सृष्टी सत रज तम अैसे तीनो प्रकारकी उत्पन्न की है. हे पापनाशक प्रभु हमारी शुद्ध के लिये हम भक्ति और पुजा नही जानते. जो संसारके भयको नाश करनेवाले भक्तजनोके मन आनंद देनेवाले. और विपत्ति के समुहको नष्ट करनेवाले हैं. मन वचन कर्मसे चतुराईको वाणी छोड़कर हम सब देवता गण आपकी शरणमें आये है ।

शारद सुनि शेष्या, रिषय असेषा, जाकहूं कोऊ नही जाना ।
जेही दीन पियारे, वेद पुकारे, द्रव सो श्री भगवाना ॥
भव वारींधि मन्दर, सब विधि सुन्दर, गुन मंदिर सुख पुंजा ।
मुनि सिद्ध सकल सुर, परमभयातुर, नमथ नाथ पदकंजा ॥

सरस्वती वेद शेष और सबऋषिओ आदिने भी उसको नहिजाना, जिन्हे दीन प्रिय है, अैसा वेद पुकारकर कहते है, वेसे हम पर दया करे. सब प्रकारकी सुन्दर गुणो के मन्दीर और जो सुखके समुह है, हे नाथ मुनि सिद्ध एवं सब देवता बहुत ही भयातुर होकर, आपके चरणार्विदको प्रणाम करते है ।

जा नि सभय सुर, भुमी, सुनि, वचन समेत सनेह ।
गगन गीरा गंभीर भई हरनि शोक संदेह ॥

देवता और भुमिको भयभित जानकर और स्नेह सहित वचन सुनकर शोक और संदेहको हरनेवाली गंभोर आकाश-वाणी हुईः—



१९ सत्य बात यही है कीः—

हरी व्यापक सर्वत्र समाना, प्रेमते प्रगट होई मै जाना।
देशकाल दिशी विदिसिहु मांही, कहहूंसो कहां जहां प्रभु नाही ॥

श्री हरी सभी जगह समान व्यापक है, प्रेमसे प्रगट होते है, यह मैं जानता हूं देश समय दिशा और विदेशामें कहो वह स्थान कहां है जहां प्रभु नहीं है? (तुलसीकृत)

" श्री राम मंदिर "

काम क्रोध मद मान न मोहा। लोभन क्षोभ न राग न द्रोहा।
जिन्हके कपट दम्भ नही मायाँ। तिन्दके हृदय बसहु रघुराया ॥

जिनके मनमें काम, क्रोध, घमंड, अहंकारा और मोह नही है। और न लोभ है। न क्षोभ है। न राग है। न संदेह है। न कपट है न दम्भ, व माया नही है, हे रामजी! आप उनके मनमें वसिये।

सब के प्रिय सबके हितकारी। दुःख सुख सरिश प्रशंशा गारी।
कह ही सत्य प्रिय वचन विचारी। जागत सोवत शरण तुम्हारी ॥

जो सबको प्यारे सबका हित करनेवाले है दुःख और बडाई तथा गाली जिन्हे एक समान है जो सच्चे और प्रिय वचन विचार कर बोलते है, तथा जो सोते जागते आप ही की शरण है।

तुम्ही छांडि गति दुसरी नाही। राम बसहुं तिन्ह मन माही।
जननी सम जान ही परनारी। धन परावु विषते विष भारी ॥

आपको छोडकर जिनको दुसरी गती नहि है। रामजी आप उनके हृदयमें वास कीजिये। जो पराई स्त्रीको माता तुल्य समजते है, तथा पराया धन विषसे भी भारी समजते है।

जे हर्ष ही पर सम्पति देखि। दुखित होहि पर विपति विषेखी।
जिन्ह ही राम, तुम्ह प्राण पिआरे, तिन्ह के मन शुभ सदन तुम्हारे ॥ realpatidar.com



जो दुसरे के ऐश्वर्य को देखकर प्रसन्न होते है, और दुसरे की विपति देखकर दुःखी होते है। जिन्हें आप प्राणोके समान प्यारे है, हे ! रामजी उनके मन आपके योग्य उत्तम स्थान है।

दोहाः—स्वामी सखा पिता माता गुरु, जिन्हके सब तुम तात।
मन मंदिर तिन्हके बसहुं सीया सहीत दोहु भ्रात ॥

हे तात जिनके स्वामि सखा पिता माता गुरु सब कुछ आप ही हो, उनके मन मन्दीरमें सिता समेत आप दोनो भाई वास कीजिये।

प. पू. महाकवि परम सन्त स शिरोमणी तुलसी कृत
२० आगम (भविष्य) वाणी

भवतारण भगवन्त भज, धारण उर धर ध्यान।
यो धारण आगम यही, निह कलंक जेही नाम ॥१॥

प. पु. महाकवि तुलसीदासजी कहते है कि:—हे मनुष्य जनम मृत्य के फेरेमे से छुड़ानेवाले भगवानकूं तुं भज, और उर (मन) में ध्यान धारण कर, कारणः—वह श्री निष्कलंकी भगवान का आगमन रुप है।

चौद तुरका दशही भुरका, जुलम करका, हजार वरका।
कसत कधरका, राज्यहि करका, मून करंदा दुःख आता ॥
किल किल हुंदा श्रुतानंन्दा, बगरंदा मदमाता।
मैं गुरु गुरु गातां उर उभराता, आगम आता दरशाता ॥

श्री मद्भागवत के स्कन्ध बारवा अध्याय १ पहलो प्रथम में भविष्यकी राजाओकी गीनती बताई है। उसीमें ८ यवन-पिछे होनेवाले १४ चौदह तुर्कोंसे गिनते है कि—

चौदा तुर्क १० दस भुरा केशवाला याने गुरूण्ड (गोरा) नृपति होगे। वह १००० वर्ष तक राज्य करके प्रजाको पिडा देगे बहुतो को कैद करेंगे, बादमें मौन राजा बनेंगे, वह ३०० वर्ष राज्य करके प्रजाको दुःख देगे, नंतर



किलकिला नगरीमें भुतानन्द राजा होगे उसके बाद दुष्टके नंतर बंगोरी नामके दुष्ट मदोन्मत राजा होगा, वह सभीको असह्य दुःख देगा, इसी वास्ते मैं मेरे गुरुको याद करता हुं मेरा दिल उलट जाता है कारण कि:—आगम (भविष्य) में भयंकर कठीन समय आता हुवा समजमें आ रहा है।

ताका अनुजंन्दा हो शीशुनन्दा, ताका नंदा वरजन्दा।
प्रविरक हुन्दा शक वरतन्दा, राज्य करन्दा रन्जत्दा॥
शक एक खटन्दा, वरस वितन्दा, बाल्हीक थिन्दा बतलाता।
में गुरु गुरु गाता उर उभराता आगम आता दरशाता॥३॥

उस वंगिरिका भाई शिशुंनन्दा होगा, उसका यशोनन्दा होगा, वह भी लोकोको धर्म गुणोसे रोकेगा बाद प्रवीरक स्वयं स्वतः का शक चलाकर १०६ एकसो छ वर्ष तक जो विःसं. १०९ गिनते है उसीको पुरा करेगा. नंतर बाल्हिक होगा ऐसा मैं आपको गुरु गुरु गुण गाता हूं और भविष्यमें जो आता है उसको बताता कहता हूं।

जग जुलमन मिन्सा पाप न चिन्सा, क्षत्रीय जनका विध विनशा।
जग बहुं पतईन्सा भुपत थिन्सा रजनी दिनसा कुहदिसा॥
तो वर्णन किन्सा धरम न चिन्सा, कर्मन गिन्सा पर खाता।
मैं गुरु गुरु गाता उर उभराता आगम आता दर साता॥४॥

वह राजा लोग अपने स्वयं स्वत के अत्याचारको जगतमें जुलुम नहीं समजेगे, पापको नही पहेचानेंगे, उसी समय क्षत्रीयोंका भविष्य विगडा हुआ होगा, सभी लोग वेद धर्मको छोड़कर अधर्म करने पर खुब राजी खुशीसे चाहने लगेगे इसीसे पापीष्ट राजा लोग रातको दिन और दिनको रात कहेंगे तो भी लोग मान लेंगे इसी पर से कहा जाता है कि:—लोग धर्मको नहीं मानेगे नही पहचानेगे वैदिक कर्मकान्डकी जो दुनियाको पापके अटकानेवाला और अन्तः करणको शुद्ध करनेवाला और पापाचारसे संकोचानेवाला ऐसे इस कर्मको श्रेष्ट



वैसा ही सदा के लिये निल वर्ण रमणिय है, वहाँ
के पास) प्रसिद्ध कांकरीया तलाव के पासमें (पिराणा
७०००० (सीतेर हजार) लश्कर लेकर पडाव डाल
कितने एक संसारको स्वयं स्वतः का वेष
जबरी सिद्धी बताकर लोकोकी भूलो (गुन्हाओं) की
पिराणाधाम बनाया ।

कल सुधारे कलंक उतारे, गढ जुनारे पदधारे ।
निहारे देश डारे, लश्कर सारे सुखीयारे ॥
रुदत आता नागलमाता, जमियल दाता संगाता ।
गुरु गाता उर उभराता आगम आता दरशाता ॥१५॥

सारी जनताका सुधार करके भुले चुके गुन्हाओंका
रकर सनमार्ग लगाकर पिराना बनाया, तब वहाँ से
ये, वहाँ शंकर भगवानकी मन्दीर के पास स्वयं स्वतः
उतार दिया, वहाँ पर वह बहुत सुखी हुए, वहाँ
र नागाल माता आये, साथमें जमियल दाता भी थें,
गुरु गाता हुं कि मेरा दिल उभर आता है और
विष्यकी बात करता हुं ।

कहावा कबर समावा, सग्रतर आवा एक साथा ।
जावा लग्न धरावा, प्रणय बनावा सुर साथा ॥
त्री कहावा नकलंग बिहावा, सतजुग आता वर ताता ।
गुरु गाता उर उभराता आगम आता दरशाता ॥१६॥

निकलंकी भगवान (मिया) स्वरुप स्वय स्वतः की
ने के लिये कबर (समाधि) में समा गये, और एकही
हुत जगह पर जनताकी दृष्टिमें दृष्टिगोचर हुए, बादमें
मुकाम पर जाकर (एक सनातन हिन्दु) स्त्री के साथ
ा, वह स्त्री मेघाबाई को पुत्रीथी मेघली उसका नाम
के हाथ पाणी ग्रहण किया, याने लग्न किया, बस्सं
ग आनेकी निशानी है, गुरु स्मरण और दिलकी
साथ मैं आगम कहता हूं ।



भोजन मन भाता खूब खिलाता, दात हिलाता सुख पाता ।
जुने फीर आता नागलमाता कर, पोखाता हरखाता ॥
जग हुकम फिराता सत्य घरावता, कलौ दीखाता सबजाता ॥
मैं गुरु गुरु गाता उर उभराता आगम आता दरशाता ॥१७॥

मेघलीबाईको परणाकर तदनंतर नकलंक पीर नाम पाकर जुनागढ रहे, वहां पर नागलमाताने हर्ष के साथ उनकी सेवा करी खुब खिलाया-पिलाया वेदशास्त्राधीन चलकर जो कुछ सत्य है उसीको ही अमलमें लाकर सभीको देश पर्यटन करते हुए श्री सनातन आर्य सतपंथ धर्म, कर्म, न्याय, नितिको समझाते हुए देश पर्यटन करते थे, कलियुग इन परिचयसे अब नष्ट होता हुआ दिखता है ।

जग जियाना भयेसयाना, गुण निधाना गुण खाना ।
आगम यही जाना पूर्ण प्रमाणा, सुनत सुजाना सुखमाना ॥
जय निकलंकी देवक भववल सेवक, "तुलसी" आनंद दाता ।
मैं गुरु गुरु गाता उर उभराता आगम आता दरशाता ॥१८॥

इसके बाद जगजिवन श्री. निकलंककीजी बडे शयाने हुशार समजदार हुए, गुणनिधान और गुण खान बने, भक्तराज कविश्री तुलसीदासजी कहते है कि मैं आपलोंगो को भविष्यमें आनेवाला समय होनेवाला धर्म, वेद, शास्त्रकी रीतभात न्याय नितिसर पूर्ण प्रमाण देकर, गतिविधिकी सुचना करी है, वह एक पूर्ण प्रमाण और सत्य आगम भविष्यवाणी है इस बातको सुनकर समजदार सजन मनुष्य सुख मानेंगे शोचेंगे और समझेंगे ।

हे जय श्री निष्कलंक देव आप भवजल से तारणहार हो आपका जय हो "तुलसी" सेवकको आनंद देनेवाले आपका जयहो, जयहो, जयहो, जयहो, जयहो ।

ॐ नमो जय श्री सच्चिदानन्द भगवान निष्कलंक नारायण देव की जय ।





ॐ नमो श्री सनातन आर्य पवित्रोतम आदर्शयुक्त सतपन्थ धर्म की जय "।

श्री सतगोर पात्र ब्रह्म ईन्द्र ईमाम शाहजी की जय।

(२१) सत साहित्य विचार सरणी

सत साहित्य अंतःकरण कौ उज्वल करता है
,, ,, जेबमें रख्खा हुआ बाग है।
,, ,, ज्ञान प्रसारके लीये अमूल्य और सुगम साधन है।
,, ,, जीते जागते देवता है।
,, ,, मानव को दानव नहि, पण देवता बनाता है।
,, ,, का मूल्य रत्नो से भी अधिक है।
,, ,, मनुष्यका सच्चामित्र और मार्गदर्शक है सदा के लीये सबसे बडा मित्र है अच्छी पुस्तक सत साहित्य।

सूचनाः--खराब चोपड़ी (पुस्तक) जैसा लूटारु दूसरा कोई नहि समयका और वैसे सद्गुणोका।

स्वाध्याय विचार शीलताकी न्युव है।
,, शिक्षीतोकी सर्व श्रेष्ठ आदत है।
,, ज्ञान संचय और आत्मविकासका सर्वोतम साधन है।
,, ज्ञान संपादनकी कुन्जी है।

स्वाध्याय-मनन के विना विचारो को स्फुर्त्ति नहि मिलती।
,, ,, मानसोक विकास नहि हो सकता।

संसारमें जीतनीभी लिपिया है उन सबमें सबसे अधिक वैज्ञानिक लीपी है देवनागरी।

यदी इस देवनागरी लिपिको स्वीकार कर लिया जाय और समस्त स्वदेश भारतीय भाषाओंका साहित्य देवनागरी लिपिमें हो तो बहुतसी कठिणायीओंका और पूर्वाग्रहोका समाधान हो सकता है वास्ते—जनता सोचे और समझे।

—पंडित नेहरू



अर्चना

तुम अपमान करो कितना भी ।
तुमको सब अधिकार है ॥
मुझे मांगने को भी बाकी ।
फकत तुम्हारा एक द्वार है ॥

जब याचक ही बन बैठा ।
फिर मेरी क्या पहिचान ? ॥
जिस विणाके तार छिन्न हो ।
क्या उसका लय गान ? ॥

मै कंगाल जन्म जन्मका ।
तुम कुबेर हो धनवान ॥
मेरे गुण अवगुण मत देखो ।
पारस खण्ड समान ॥

मैने आपा सोपा तुमको ।
बोलो क्या स्विकार है ? ॥
तुम अपना करो कितना भी ।
तुमको सब अधिकार है ॥१॥

अभी कामना शीतल ज्वरसे ।
अंग अंग काप रहा ॥
पूर्ति वस्त्र ढाको कितने भी ।
चढता ताप महां ॥

तिक्तौषधि साधन, यम, संयम ।
सेवन शक्ति कहां ! ॥
व्याधि निदान उसे मिलता है ।
जिसने चरण गहां ॥

महा वैद्य भव भिम रोग के ।
ज्ञात तुम्हे उपचार है ॥
तुम अपमान करो कितना भी ।
तुमको सब अधिकार है ॥२॥



यह जीवन उद्यान शुष्कसा ।
खिली न एक कली ॥
अनहद नाद भ्रमर न गुंजा ।
आभा भी न मिली ॥

मेरी मूक भावना यो ही ।
घूट घूट कर मचली ॥
बगीचा के माली बिन सुनो ।
मेरी गली गली ॥

कब बसन्त बरसेगा मुझ पर ?।
अब तक तो पत झार है ॥
तुम अपमान करो कितना भी ॥
तुमको सब अधिकार है ॥३॥

मेरी ओर न देखो दाता ।
तुम जग के हो धाता ॥
मेरे सब कुछ तुम्ही एक हो ।
गुरु, पितु, माता भ्राता ॥

युग युग से चलते आया है ।
नित्य निरन्तर नाता ॥
मेरा सर्वेश तन, मन जीवन ।
मंगल भाग्य विधाता ॥

फिर भी द्रवित न हो तुम पाये ।
यह प्रत्यक्ष प्रहार है ॥
तुम अपमान करो कितना भी ।
तुमको सब अधिकार है ॥४॥